विश्व की कहानी

[सूर्य, पृथ्वी, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्रों आदि की सचित्र कहानी ।]



सौरपरिवार की उत्पत्ति संभवतः इसी प्रकार हुई होगी

विश्व की कहानी

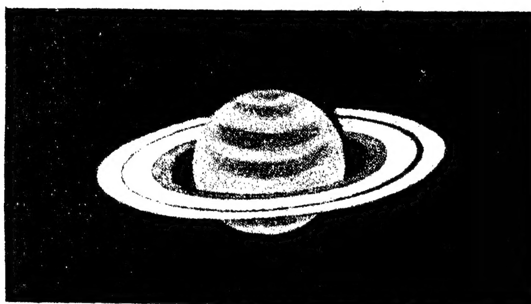
सूर्य, पृथ्वी, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्रों
आदि की सचित्र कहानी।

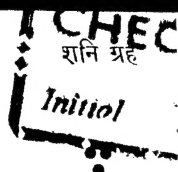
∴

लेखक

सत्यजीवन वर्म्मा, एम० ए०

[श्रीभारतीय]





शनि ग्रह

प्रकाशक

नंदकिशोर ब्रदर्स

बनारस

प्रकाशक
नंदकिशोर ब्रदर्स,
चौक, बनारस

प्रथम संस्करण—१९४२
मूल्य डेढ़ रुपया

मुद्रक
ए० बी० वर्मा
शारदा-प्रेस, नया-कटरा-प्रयाग

वक्तव्य

हिन्दी साहित्य में ऐसी पुस्तकों की बड़ी कमी है जिनके द्वारा जन-साधारण की जानकारी बढ़ाई जा सके। जो कुछ हैं भी वे महँगी और वैज्ञानिक दृष्टि से लिखी हुई हैं। उनका मूल्य भी साधारण खरीदारों के बस के बाहर है। इस कमी को दूर करने के लिए यह निश्चय हुआ कि छः पुस्तकों का एक ऐसा सेट तैयार किया जाय जिसके द्वारा नव-युवक-युवतियों और साधारण पाठकों को क्रमशः विश्व की उत्पत्ति, पृथ्वी का जन्म, जीव की उत्पत्ति, मनुष्य का विकास तथा संसार की जातियों के इतिहास का ज्ञान कराया जा सके। इस सेट के लिखने का भार मैंने और मेरे मित्र प्रयाग विश्वविद्यालय, के जीव-विज्ञान के अध्यापक श्रीचरण जी वर्मा, एम० एस-सी० ने अपने ऊपर लिया। हमारे प्रस्ताव से सहमत होकर काशी के प्रकाशक, नंदकिशोर एण्ड ब्रदर्स ने इस ग्रंथमाला के प्रकाशन का भार अपने ऊपर लिया, यह संतोष का विषय था। इस ग्रन्थमाला में निम्नलिखित पुस्तकों के रखने का विचार किया गया है:—**१—विश्व की कहानी, २—पृथ्वी की कहानी, ३—जीव की कहानी, ४—मनुष्य का विकास, ५—जातियों की कहानी, ६—हमारे देश की कहानी**। इनमें कुछ मैं और कुछ मेरे सहयोगी श्रीचरण वर्मा जी लिख रहे हैं।

आज हम उपर्युक्त माला की पहली पुस्तक पाठकों को भेंट करते हैं। इस पुस्तक में सरल रीति से, यथासंभव चित्रों को देकर, विश्व की उत्पत्ति, विकास तथा आकाशीय पिण्डों की रोचक कथा लिखी गई है। पुस्तक का संबंध ज्योतिष विद्या से नहीं

नोट—दूसरी पुस्तक पृथ्वी की कहानी प्रेस में है; शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

वरन् उसके संबद्ध ज्ञान से है। यह पुस्तक साधारण पाठकों का मनोरञ्जन करते हुए उनकी जानकारी बढ़ावे, यही लेखक का ध्येय है। यह पुस्तक विज्ञान के छात्रों के लिए नहीं वरन् विज्ञान के जिज्ञासुओं के लिए है। हम आशा करते हैं कि हमारे इस अल्प प्रयत्न से हिन्दी पाठकों को लाभ पहुँचेगा।

इस पुस्तक के लिए हमें हिन्दुस्तानी एकेडेमी से कुछ ब्लाक उधार मिले हैं, जिसके लिए हम उसके वर्तमान मंत्री, खाँ साहब ए० काज़्मी महोदय के अत्यन्त अनुगृहीत हैं।

इस पुस्तक के प्रणयन में मेरे मित्र श्रीचरणान जी वमा तथा डा० गोरख प्रसाद जी ने अनेक अत्यंत उपयोगी परामर्श दिये हैं। हम उन के अभारी हैं।

प्रयाग
३१-३-४२

विषय-सूची

१—विश्व प्रपंच

[पृष्ठ १ से १७ तक]

क्या कभी आपने सोचा है ?—दिन-रात क्यों होता है ?—मौसिम के कारण—पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा क्यों करती है ?—पृथ्वी किस पर टिकी है ?—ग्रह-उपग्रह—तारे—ज्योतिष-यंत्र—अनन्त आकाश—प्रकाश वर्ष-मान—विश्व-दर्शन ।

२—विश्व का विकास

[पृष्ठ १८ से ३३ तक]

सब से पुराना प्रश्न—पुरानी कल्पनाएँ—विश्व-विकास के प्राचीन सिद्धान्त—अन्य मत—सौर-जगत् की उत्पत्ति—विश्व का विकास—शंका-समाधान—अनुमान का आधार—इसका प्रमाण ।

३—सौर-परिवार

[पृष्ठ ३५ से ४२ तक]

हमारा पता ठिकाना—विराट्-विश्व—सौर-परिवार—ग्रह-परिचय—सौर-परिवार के सदस्य—ग्रहों के वर्षमान में भिन्नता—ग्रहों के दिनमान—ग्रहों का आकार ।

४—हमारा सूर्य

[पृष्ठ ४३ से ६० तक]

महान सूर्य—सूर्य—सूर्य के भीतर ?—सूर्य की गति—सूर्य के कलंक—कलंक क्या हैं ?—चुम्बकीय आँधी—सूर्य का प्रकाश-मण्डल—

वर्ण-मण्डल—मुकुट वा कोरोना—सूर्य की आयु—सूर्य का आकर्षण—क्या सूर्य घटता है ?—सूर्य में गरमी कहाँ से आती है ?—सूर्य के ताप का कारण—परमाणु का आचरण—महान प्रश्न ?

५—बुध और शुक्र

[पृष्ठ ६१ से ७१ तक]

बुध और शुक्र—बुध-शुक्र की तौल—बुध पर ताप—कलामय बुध का दर्शन—बुध की दशा—शुक्र का व्यास—शुक्र का वायु-मण्डल—क्या शुक्र में प्राणी हैं ?—शुक्र की कलाएँ—शुक्र का वृत ।

६—पृथ्वी और चन्द्र

[पृष्ठ ७२ से ९६ तक]

हमारी पृथ्वी—पृथ्वी का पिण्ड—रात-दिन, मौसिम—मौसिम के कारण—चाँद से पृथ्वी कैसी लगती है ?—चाँद—चाँद की कलाएँ—चाँद के कलंक—चन्द्रतल की जाँच—चन्द्रमा की उत्पत्ति—ग्रहण के कारण ।

७—मंगल और अवान्तर ग्रह

[पृष्ठ ९७ से १०८ तक]

मंगल—मंगल का रूप—मंगल की नहरें—मंगल का वायु-मण्डल—क्या मंगल पर प्राणी हैं ?—मंगल के दो उप-ग्रह—अवान्तर ग्रह ।

८—बृहस्पति और शनि

[पृष्ठ १०९ से १२० तक]

बृहस्पति—बृहस्पति का पिण्ड—बृहस्पति की सतह—बृहस्पति के उपग्रह—शनि—शनि का विचित्र रूप—शनि के वलय क्या हैं ?—शनि के चाँद—नये ग्रहों का पता—सौर-ब्रह्माण्ड का विस्तार ।

९—उरण, वरुण और कुबेर

[पृष्ठ १२१ से १३१ तक]

तीन नये ग्रह—उरण—उरण के भीतर—उरण के चन्द्रमा—वरुण की खोज—वरुण—कुबेर का पता—कुबेर का पिण्ड।

१०—केतु और उल्काएँ

[पृष्ठ १३२ से १४६ तक]

अशुभ केतु—केतु क्या हैं?—केतु की बनावट—उल्काएँ—उल्काएँ क्या हैं?—उल्का-प्रस्तर—उल्का-प्रस्तर की बनावट—उल्काओं की कक्षा।

११—आकाश की सैर

[पृष्ठ १४७ से १६० तक]

आकाश के गर्भ में—तारों की दूरी—तारों का प्रकाश—तारों का तापमान—तारों की अवस्था—नये तारे—तारों के भेद—तारे सूर्य हैं—नीहारिका की दूरी, गति आदि—अनंत आकाश।

१२—ज्योतिष और उसके सहायक यंत्र

[पृष्ठ १६१ से १८० तक]

ज्योतिष—ज्योतिष शास्त्र का विकास—मूल विज्ञान—प्राचीन काल में ज्योतिष—प्राचीन यूरोप में ज्योतिष—नये युग में ज्योतिष—नवीन युग—न्यूटन—आधुनिक युग का ज्योतिष—ज्योतिष के सहायक—दूरबीन—दर्पणयुक्त दूरदर्शक—दुनिया का सब से बड़ा दूरदर्शक—रश्मि-विश्लेषक यंत्र आदि।

सहायक ग्रन्थ

अँग्रेज़ी—

1. STARS AND PLANETS by Donald. H. Menzel. The University Series. Highlights of Modern Knowledge. Chapman and Hall Ltd. London.

2. THE MARVELS AND MYSTERIES OF SCIENCE by Ellison Hawks. The Home Library Series. The Times of India.

3. ASTRONOMY FOR EVERY BODY by Simon Newcomb. The Garden City Publishing Inc. New York.

4. THE OUTLINE OF SCIENCE by A. Thomson.

5. CONCLUSION OF MODERN SCIENCE by Walter Grierson.

हिन्दी—

१—*सौर-परिवार*—डा० गोरख प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग

२—*विज्ञान-हस्तामलक*—प्रो० रामदास गौड़, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग



विश्व की कहानी



यदि हम चन्द्रमा पर खड़े होकर देखें, तो हमारी पृथ्वी इसी प्रकार आकाश में दिखाई पड़ेगी।

विश्व की कहानी

१—विश्व-प्रपंच

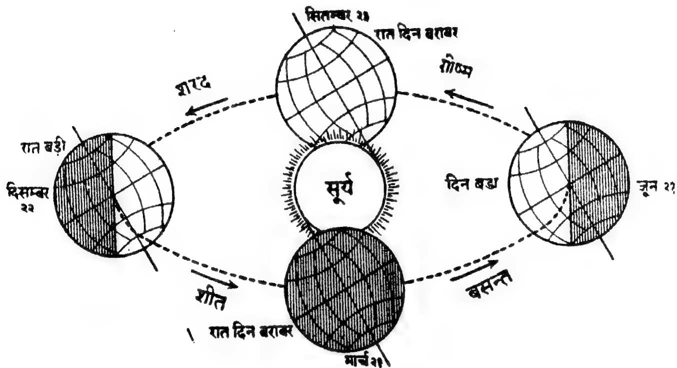
१—क्या कभी आपने सोचा है?—प्रिय पाठकगण! प्रातःकाल आप नित्य पूरब में सूर्य को निकलते देखते हैं, रात में चन्द्रदेव का चमकना देखते हैं, असंख्य तारों से भरे आकाश की शोभा देखते हैं, समय-समय पर आपने सूर्य वा चन्द्र में ग्रहण लगते भी देखा होगा, आपकी आँखों के सामने अनेक बार रात में उल्का या तारे भी टूटे होंगे, आपने अपने बड़े-बूढ़ों के मुख से केतु वा पुच्छल तारों के आकाश में उदय होने की कथा भी सुनी होगी—क्या कभी आपने इस पर विचार किया है कि ये सब—सूर्य, चाँद, तारे, उल्का तथा केतु आदि क्या हैं? क्या

कभी आपने इस पर विचार किया है कि इस अनंत आकाश में क्या हो रहा है ? क्या कभी आपने इस पर विचार किया है कि इस महान नक्षत्र-मण्डल की उत्पत्ति कैसे हुई है—हमारा सूर्य कैसे उत्पन्न हुआ, हमारी पृथ्वी का जन्म कैसे हुआ है ? यदि आपने कभी इसे सोचा होगा तो यह अद्भुत रहस्य अत्यंत गूढ़ और कुतूहलपूर्ण मालूम हुआ होगा। आज हम आपको इन्हीं सबकी विचित्र कहानी सुनाना चाहते हैं। हम आशा करते हैं कि आप इसे ध्यान से सुनेंगे और समझने की कोशिश करेंगे।

२-दिन-रात क्यों होता है ?—आप जानते हैं, सवेरा क्यों होता है, संध्या क्यों होती है ? यही न कि हमारी पृथ्वी अपनी धुरी पर पूर्व दिशा में घूमती है—इसी कारण उसका केवल आधा भाग ही सूर्य के सामने एक बार आ सकता है। जब कोई भाग सूर्य के सामने आता है तब उस भाग में रोशनी रहती है और वहाँ दिन रहता है। धीरे-धीरे पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती जाती है और उसका वह भाग सूर्य के सामने से हटता जाता है। हमारे देखने में सूर्य पूरब दिशा में उदय होकर दोपहर के समय लगभग हमारे सर पर पहुँच कर संध्या को पश्चिम में अस्त हो जाता है। सूर्य के चले जाने पर रात हो जाती है; आकाश में तारे दिखाई पड़ने लगते हैं। फिर रात का अवसान होता है और पुनः ऊषा की लाली दिखाई पड़ती है, सवेरा होता है और सूर्य चमकने लगता है। यह सब दिन-रात का क्रम हमें पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण दिखाई पड़ता है। यदि

पृथ्वी अपनी धुरी पर न घूमे तो उसके एक भाग में सदा दिन और दूसरे भाग में सदा अंधकारमय रात्रि रहे !

३—मौसिम के कारण—अपनी धुरी पर घूमने के अतिरिक्त हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर भी लगाती है। पृथ्वी की धुरी, पृथ्वी की कक्षा के हिसाब से ठीक सीधे नहीं खड़ी

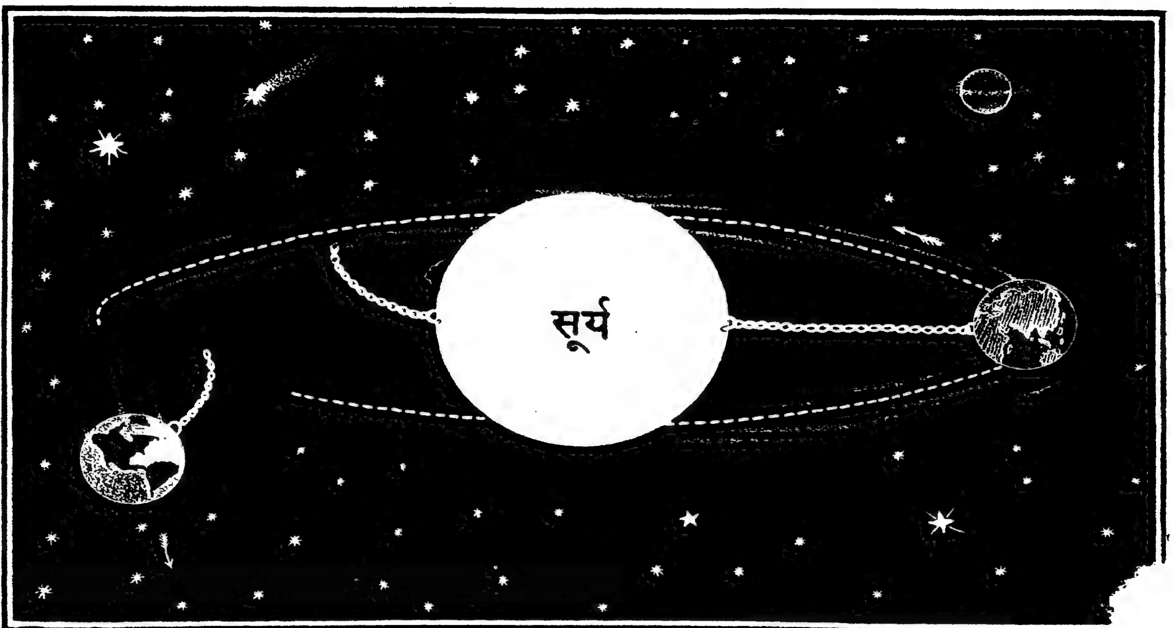


पृथ्वी जिस कक्षा पर सूर्य्य की प्रदक्षिणा करती है, वह दीर्घ वृत्ताकार वा अण्डे के आकार का अर्थात् ellipse है।

है। वह करीब २३½ डिगरी झुकी हुई है। इसका परिणाम यह होता है कि सूर्य के चारों ओर घूमती हुई पृथ्वी का कभी उत्तरी ध्रुव सूर्य के सामने आता है, कभी दक्षिणीय ध्रुव। इस प्रकार उसके उत्तरीय और दक्षिणीय गोलार्ध में क्रम से छोटे-बड़े दिन रात होते हैं और उन्हें न्यूनाधिक ताप मिलता है। इसका परिणाम यह होता है कि पृथ्वी के उन हिस्सों में ऋतु-परिवर्तन होता है। यदि

पृथ्वी की धुरी पृथ्वी की कक्षा पर ठीक लंब (Perpendicular) होती और उससे ठीक समकोण बनाती होती, तो रात-दिन सदा बराबर ही रहते और प्रत्येक स्थल पर सूर्य से ताप सदा एक-समान मिलता। इससे शायद हमारी धरती पर मौसिम न होती। अपनी धुरी पर घूमती हुई पृथ्वी साल भर में सूर्य की प्रदक्षिणा करती है। जिस पथ पर पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है, उसे पृथ्वी-कक्षा (Orbit) कहते हैं। यह कक्षा बिल्कुल गोल वा वृत्ताकार नहीं है वरन् इसका आकार दीर्घवृत्त वा अण्डे के आकार का है। अंग्रेजी में ऐसी शकल को ellipse कहते हैं।

४—पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा क्यों करती है ?— आप पूछ सकते हैं पृथ्वी क्यों घूमती है ? इसके विषय में ज्योतिषी लोग कहते हैं कि यदि कोई पिंड चलता रहे और उसे विचलित करने के लिए कोई बाहरी शक्ति न रहे तो वह पिंड बराबर सीधी रेखा में चलता चला जायगा। यदि पृथ्वी वस्तुतः स्वतंत्र होती तो इस नियम के अनुसार वह भी सीधी रेखा में ही चलती, परंतु सूर्य उसे बराबर अपनी आकर्षणशक्ति से खींचता रहता है। यदि पृथ्वी को सूर्य अपनी ओर न खींचे, तो हमारी पृथ्वी सीधी रेखा में भागती हुई आकाश में न जाने कहाँ कितनी दूर चली जाय। सूर्य के खिंचाव और पृथ्वी के सरल रेखा में चलने की प्रवृत्ति के संमिश्रण का यह परिणाम होता है कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती रहती है। इस प्रकार वह एक वर्ष में अपनी कक्षा में भ्रमण करती है।



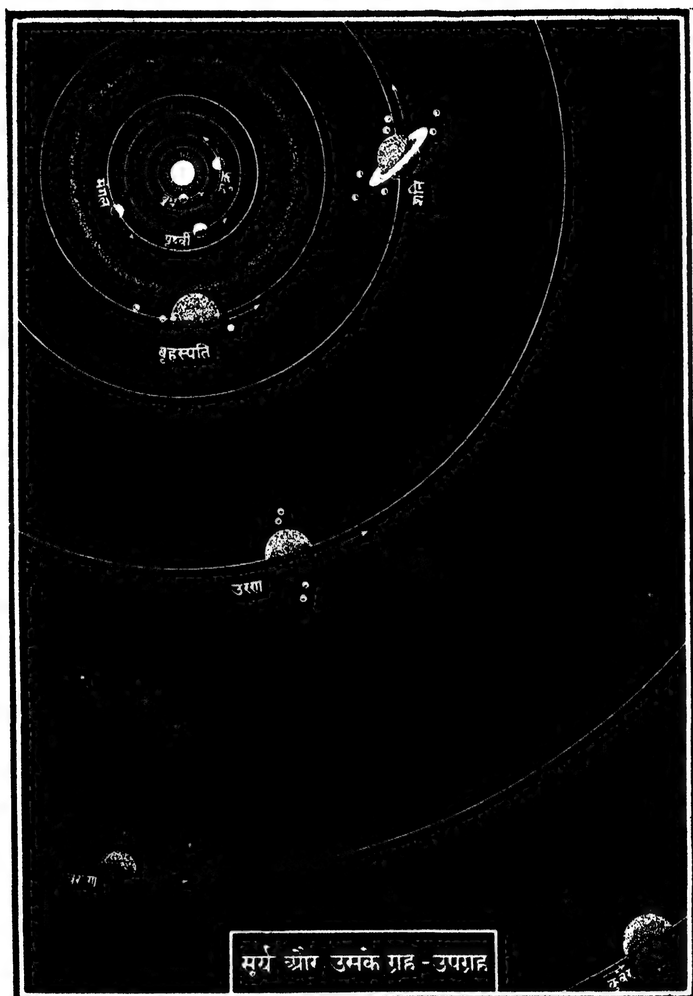
यदि पृथ्वी को सूर्य्य अपनी ओर न खींचे तो हमारी पृथ्वी सीधी रेखा में भागती हुई आकाश में न जाने कितनी दूर चली जाय।

[पृष्ठ ४]

५—पृथ्वी किस पर टिकी है ?—चाँद को हम देखते हैं कि वह आकाश में टँगा हुआ दिखाई पड़ता है। उसी प्रकार यदि हम चन्द्रमा पर खड़े हो कर देखें तो हमारी पृथ्वी भी आकाश में एक गोले की भाँति टँगी हुई दिखाई पड़ेगी। आप पूछ सकते हैं कि यह कैसे होता है, पृथ्वी गिर क्यों नहीं पड़ती, आखिर पृथ्वी किस पर टिकी हुई है ? पुराने समय में लोग इस रहस्य को नहीं समझ पाये थे, तब उन लोगों ने पृथ्वी के लिए भिन्न-भिन्न आधारों की कल्पना की थी। हमारे यहाँ के प्राचीनों ने यह निश्चय किया था कि पृथ्वी को शेषनाग अपने फण पर उठाये हुये हैं और शेषनाग स्वयं एक अनंत सागर में तैर रहे हैं। इस प्रकार की कल्पना अन्य देश के लोगों ने भी की थी। 'थेल्स' नामक ज्योतिषी अपने समय का बड़ा बुद्धिमान महापुरुष समझा जाता था। परन्तु इसका भी विश्वास था कि पृथ्वी का गोला पानी पर तैर रहा है ! इस प्रकार भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न कल्पनाएँ हुईं। ऐसी कल्पनाओं की आवश्यकता केवल इसलिए पड़ी कि लोग समझते थे कि आधार के न रहने पर पृथ्वी गिर पड़ेगी। परंतु आजकल तो विज्ञान ने यह प्रमाणित कर दिया है कि पृथ्वी पर की वस्तुएँ पृथ्वी की ओर इसलिए गिरती हैं कि उनको पृथ्वी अपनी ओर खींचती है। पृथ्वी स्वयं किधर गिरेगी और क्यों गिरेगी ? पृथ्वी केवल उधर ही जा सकती है जिधर कोई दूसरा पिंड उसे खींचे, पृथ्वी पर सूर्य का ही आकर्षण सबसे अधिक पड़ता है। यदि पृथ्वी किसी प्रकार क्षण भर के

लिए निश्चल करके छोड़ दी जा सकती तो अवश्य ही वह जाकर सूर्य पर गिरती—सूर्य का आकर्षण उसे खींच ले जाता। परंतु जैसा हम ऊपर देख चुके हैं, पृथ्वी की, सूर्य से दूर सरल रेखा में भाग निकलने की प्रवृत्ति और सूर्य का आकर्षण—ये दोनों इस प्रकार समतुलित हैं कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमा करती है; गिर कर सूर्य से नहीं जा भिड़ती। आकर्षण के संबंध में वैज्ञानिकों का कहना है कि विश्व के सभी पिंड एक दूसरे को अपनी ओर खींचते रहते हैं। इस खींचने को गुरुत्वाकर्षण कहते हैं। इस आकर्षण का परिणाम यह होता है कि इस अनंत आकाश के शून्य प्रदेश में हमारी पृथ्वी, सूर्य, चाँद, ग्रह-उपग्रह आदि पिण्ड नियमानुसार चलते रहते हैं।

इस गुरुत्वाकर्षण शक्ति के विषय में पहले-पहले इंलैण्ड देश के रहनेवाले विद्वान न्यूटन (Newton) ने सिद्धांत निश्चय किया था। इस सिद्धांत के अनुसार दो पिण्ड एक दूसरे को जिस शक्ति से खींचते हैं उसकी मात्रा इन दो पिण्डों के द्रव्यमानों (Mass) के गुणनफल के अनुपात में कम या ज्यादा रहती है और साथ ही इन दो पिण्डों की दूरी के वर्ग (Square) के हिसाब से भी घटती-बढ़ती है। दूरी के दुगुनी हो जाने पर आकर्षण चौथाई हो जाता है; दूरी के तिगनी हो जाने पर आकर्षण केवल नवाँ भाग ही रह जाता है इत्यादि। जब हम गेंद को ऊपर उछालते हैं तो वह इसलिए गिर पड़ता है कि पृथ्वी उसे खींचती ही, परन्तु गेंद भी थ्वी को ठीक उतनी ही



सूर्य और उसके ग्रह - उपग्रह

इस प्रकार सूर्य्य की प्रदक्षिणा करने वाले और भी पिण्ड है जिन्हें हम ग्रह कहते हैं। [पृ० ९]

शक्ति से अपनी ओर खींचता है। पृथ्वी का द्रव्यमान गेंद से अरब-खरब गुना अधिक है--पृथ्वी गेंद से कहीं अधिक भारी है। इसीलिए जब से गेंद बीस-पचीस फुट खिच आता है तब से पृथ्वी इंच के करोड़ों भाग से भी कम खिच पाती है। परिणाम यह होता है कि पृथ्वी हमें अचल जान पड़ती है और गेंद गिरता हुआ जान पड़ता है। परन्तु पृथ्वी को गेंद ठीक उतनी ही शक्ति से खींचता है जितनी कि पृथ्वी गेंद को खींचती है।

६—ग्रह-उपग्रह—आपको मालूम है कि हमारी धरती सूर्य के चारों ओर घूमती है। इस प्रकार सूर्य की प्रदक्षिणा करनेवाले और भी पिण्ड हैं जिन्हे हम ग्रह या Planet कहते हैं। इनके अतिरिक्त एक हजार से कुछ अधिक छोटे-छोटे ग्रह भी हैं, जिन्हें अवांतर ग्रह कहते हैं। सूर्य के इस परिवार को हम सौर-परिवार, सौर-मण्डल या सौर-जगत् के नाम से पुकारते हैं। हाँ, एक बात और है; जिस प्रकार हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है उसी भाँति चन्द्रमा पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है। इसलिए चन्द्र को पृथ्वी का उपग्रह कहते हैं। इस प्रकार के उपग्रह अन्य ग्रहों के साथ भी पाये जाते हैं—इन्हें अंग्रेजी में Satellites कहते हैं। हमारे इस सौर-जगत् के समान ही आकाश में न जाने कितने और जगत् होंगे, संभव है इनकी तुलना में हमारा सौर-जगत् बहुत ही क्षुद्र जान पड़े।

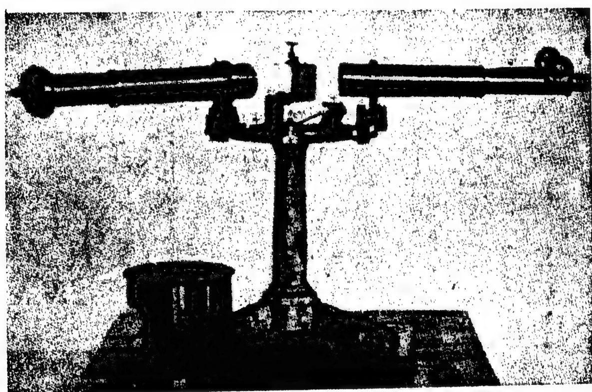
७-तारे—आप रात के समय स्वच्छ आकाश की ओर देखते हैं तो आपको तारे जग-मगाते हुए दिखाई पड़ते हैं। पहले

तो ये असंख्य जान पड़ते हैं, परन्तु सावधानी से देखने पर पता चलता है कि यदि कोई उन्हें गिनना चाहें, तो उन्हें गिन सकता है। एक समय में एक स्थान में आप आँखों से दो हजार से अधिक तारे नहीं देख सकते। तारों की ऐसी सूचियाँ भी प्रकाशित हुई हैं जिसमें दुनिया के भिन्न-भिन्न स्थानों से दिखाई पड़नेवाले समस्त तारों की गिन्ती दी गई है। कोरी आँख से दिखलाई पड़नेवाले तारों की संख्या लगभग छः हजार है। छोटी दूरबीन से देखने पर पचीस-तीस हजार तारे देखे जा सकते हैं। परन्तु आकश के समस्त तारों का यह एक बहुत ही छोटा अंश है। अधिक शक्तिशाली दूरबीन से देखने पर कहीं अधिक तारे दिखाई पड़ते हैं। ऐसा क्यों होता है? बात यह है, कि आँखों की अपेक्षा दूरबीन अधिक दूर तक देख सकती है। छोटी दूरबीन की अपेक्षा बड़ी दूरबीन और दूर तक देखती है। इस प्रकार जितनी ही बड़ी दूरबीन होगी उतनी दूर तक के तारे हम देख सकेंगे। वर्तमान बड़ी-से-बड़ी दूरबीन से दुगनी बड़ी दूरबीन बनाने की कोशिश हो रही है। उसके बन जाने पर हमें बहुत ही अधिक तारे दिखाई पड़ेंगे। यदि आप तारों की गिनती सुनना चाहें तो सुन सकते हैं। ज्योतिषी लोगों का अनुमान है कि विश्व में अनेक ब्रह्मांड हैं और प्रत्येक ब्रह्मांड प्रायः असंख्य तारों का समूह है। जिस ब्रह्मांड में हम हैं, उसमें प्रसिद्ध आधुनिक ज्योतिषी सर जेम्स जीन्स के अनुसार, २०,००,००,००,००,००,००,००,००, ००, ००,००० तारे होंगे। यह सुनकर आप आश्चर्य में पड़ जाँयगे

कि इन तारों में से अधिकांश हमारे सूर्य की तरह सूर्य हैं, पर उससे बड़े हैं। हो सकता है इन सूर्यों के भी ग्रह-उपग्रह हों। इस तरह इस विस्तृत आकाश में कोने-कोने में हमारे सौर-ब्रह्मांड की भाँति अनेक ब्रह्मांड वर्तमान हैं जिनके विषय में हम अभी कुछ नहीं जानते।

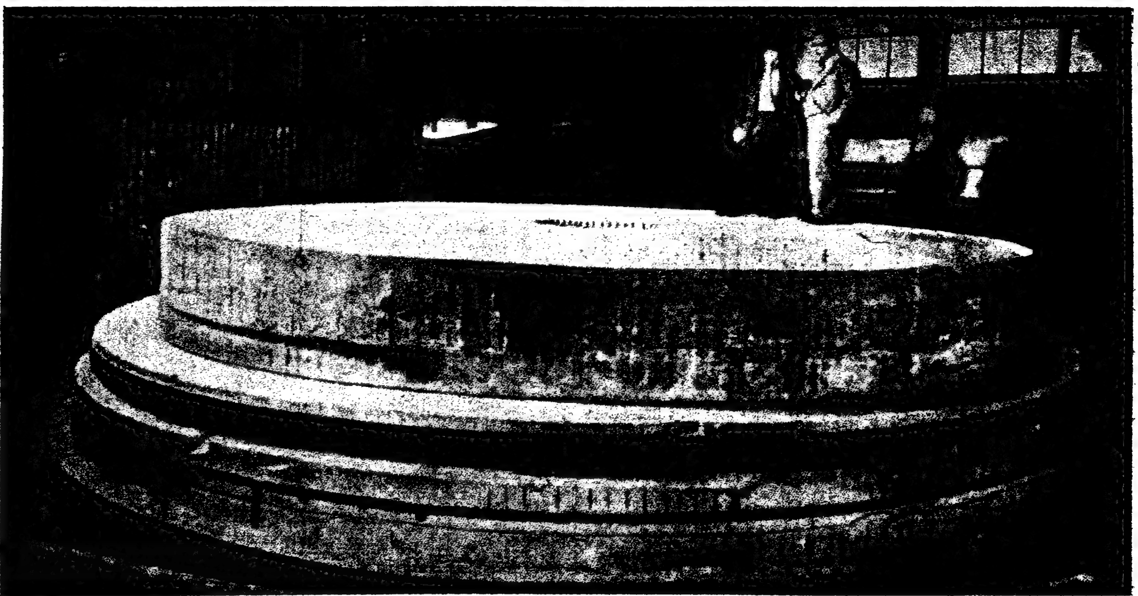
८–**ज्योतिष यंत्र**—आकाश के गर्भ में क्या है, इसके बारे में मनुष्य आदि काल से जानने की इच्छा रखता आया है। इसी कारण ज्योतिष विद्या की नींव प्राचीन काल ही में पड़ी थी। कुछ लोग तो इसी लिए उसे सब विज्ञानों का पिता मानते हैं। ज्योतिष की सहायता से हम आकाश के पिण्डों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसी की सहायता से हम तारों की दूरी, उनकी बनावट, उनकी तौल, ताप, प्रकाश आदि की जाँच करते हैं। इसी ज्योतिष की सहायता से हम गणना करके पहले ही से सूर्य वा चाँद में लगनेवाले ग्रहण के ठीक समय का पता पाते हैं। इस ज्योतिष की सहायता के लिए आजकल बहुत से यंत्र आदि बन गये हैं। इन यंत्रों में दो यंत्र प्रधान हैं। एक तो है दूरदर्शक यंत्र, (Telescope) जिसकी सहायता से हम दूर-से-दूर की वस्तु देख सकते हैं, उसका फोटो या छाया-चित्र ले सकते हैं। दूसरा है रश्मि-विश्लेषक यंत्र (Spectroscope) जिसकी सहायता से हम तारों के प्रकाश-किरणों की जाँच करके यह जान सकते हैं कि उनमें क्या-क्या पदार्थ हैं। दूरबीन की ईजाद पहले-पहल इटलीनिवासी गैलीलियो (Galileo) ने की थी। इसके बाद तो

इसमें दिनों दिन उन्नति होती गई और अब तो ऐसी शक्तिशाली दूरबीनें बन रही हैं, जिनकी सहायता से दूर-से-दूर के तारे देखे जा सके हैं। अभी हाल में अमेरिका में २०० इंच व्यास के दर्पण की दूरबीन बनाने की तैयारी हो रही है। यह दुनिया की सबसे बड़ी दूरबीन होगी। कहते हैं इससे देखने पर चाँद इतना निकट जान पड़ेगा मानो २५ मील की दूरी पर हो !



रश्मि-विश्लेषक यंत्र—(Spectroscope)

रश्मि विश्लेशक यंत्र का आविष्कार पहले-पहल इंगलैण्ड-निवासी न्यूटन (Newton) ने किया था। इसमें शीशे का एक त्रिपार्शव या तिपहला टुकड़ा रहता है जिसके भीतर से होकर जब प्रकाश की किरणें आती हैं, तो वे भिन्न-भिन्न रंगों में बँट जाती हैं। प्रत्येक वस्तु से आया हुआ प्रकाश कुछ भिन्न रंग का रहता है। इसलिए यह पता लग जाता है कि जिस वस्तु से



१९३४ में ढाला गया २०० इंच वाले दूरदशक यंत्र का दर्पण । यह २७ इंच मोटा है । उसका वजन ५४० मनहै ।

[पृ० १२]

प्रकाश आ रहा है, उसमें कौन-कौन से पदार्थ हैं। इन दो यंत्रों के अतिरिक्त और छोटे-बड़े बहुत से यंत्र हैं जिनकी सहायता ज्योतिष को लेनी पड़ती है।

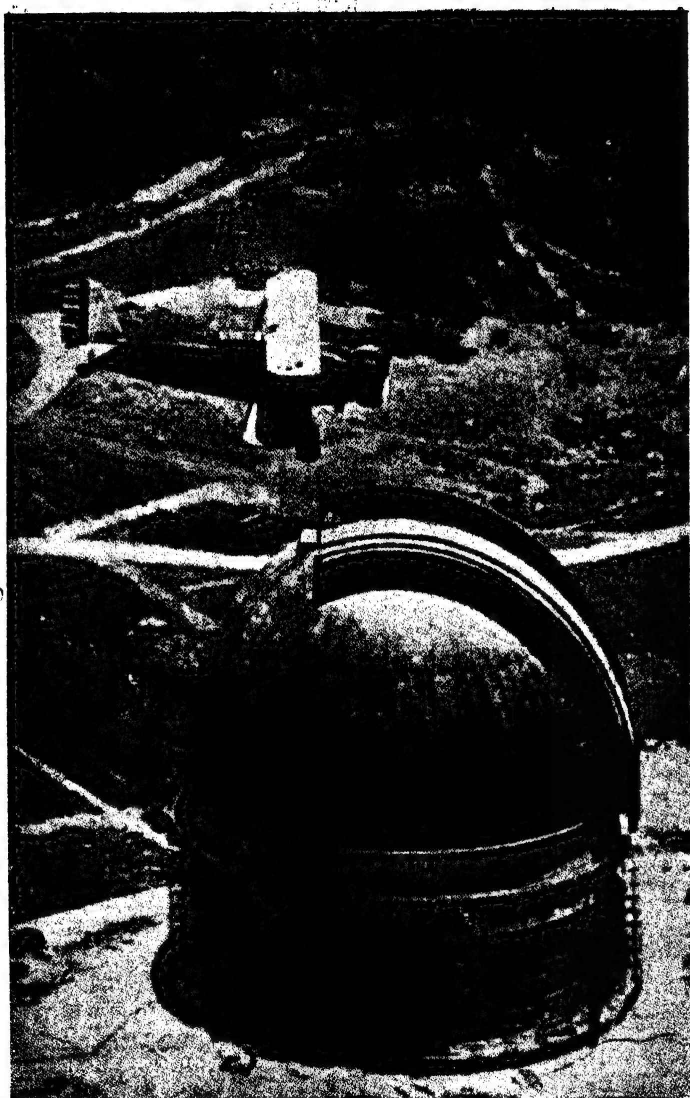


गेलीलियो की बनाई दूरबीन, जो इस समय इटली के नगर फ्लोरेन्स के अजायब घर में सुरक्षित है।

९—अनंत आकाश—अब आपको कुछ अंदाज़ लग गया होगा कि इस आकाश में कितने पिण्ड हमारे सूर्य की भाँति हैं। अब क्षण भर के लिए आप इस विस्तृत आकाश प्रदेश के विस्तार का अनुमान कीजिए। शायद इस तरह आपकी कल्पना-शक्ति जाग्रत न हो। अच्छी बात है, पहले यह समझ लीजिए कि हमारी पृथ्वी सूर्य से ९,३०,००,००० [नौ करोड़ तीस लाख] मील दूर है। हमारे सूर्य का सब से दूर का ग्रह कुबेर उससे ३,७०,००,००,००० मील दूर है। तोप का गोला भी, जो भयानक वेग से चलता है, यदि सूर्य से कुबेर की ओर दागा जाय तो वहाँ तक पहुँचने में उसे साधारण तेज़ी से पार करने में

७०० वर्ष से अधिक लगेंगे! सौर-जगत् का यह विस्तार आकाश में केवल एक बिंदु सरीखा है। निकटतम तारे इससे कई अरब-खरब मील अधिक दूरी पर हैं। ज्योतिष के पंडितों का कहना है कि हमारे ब्राह्मांड को पार करने में प्रकाश जैसे द्रुतगतिशील वस्तु को भी ६,००,००,००,००० वर्ष लग जाँयगे। इस प्रकार के न जाने कितने और सौर-जगत् वा ब्राह्मांड होंगे!

१०–**प्रकाश वर्षमान**—इस पृथ्वी पर रहनेवाले हम लोग काम चलाने के लिए इंच, फुट, गज़, फलांग, और मीलों में दूरी नापते हैं परन्तु आकाश जैसे छोरहित प्रदेश में तारों की दूरी नापने के लिए ज्योतिषी प्रकाश वर्ष से काम लेता है। प्रकाश की किरणों की गति अत्यंत तीव्र है। इससे तेज़ चलने-वाले पदार्थ का अभी पता नहीं लगा। ये प्रकाश किरणें एक सेकेंड में १,८६,३८६ मील चलती हैं। एक वर्ष में ये साठ खरब मील चलती हैं। इस तरह जब दूरस्थ तारों की दूरी बतलानी होती है तब ज्योतिषी यह नहीं लिखता कि अमुक तारा हमारी पृथ्वी से इतना मील दूर है, वरन वह हमें यही बतलाता है कि वह तारा हमारी पृथ्वी से इतने प्रकाश वर्ष दूर है अर्थात् उस तारे के प्रकाश को हम तक पहुँचने में इतना समय लगता है। इस मानदण्ड के अनुसार पृथ्वी से निकटतम तारा ४$\frac{३}{३}$ प्रकाश वर्ष दूर है। एड्रोमीडा नामक दूरस्थ नीहारका हमारी पृथ्वी से ९,००,००० प्रकाशवर्ष दूर है। आकाश में दीख पड़नेवाली 'आकाश गंगा' हमसे

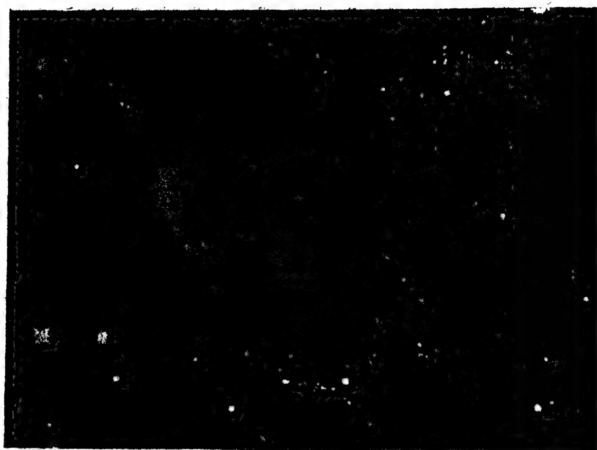


२०० इञ्चवाले टेलिस्कोप या दूरबीन का घर जो अमेरिका में बनाया जायगा।

२,००,००,००० से ५,००,००,००० प्रकाशवर्ष दूर होगी !! अब इस विराट् विश्व की रचना कैसे हुई, इसे जानने का कुतूहल होता है।

११–विश्वदर्शन—आपने आकाश प्रदेश के छोर-रहित विस्तार का अनुमान कर लिया होगा। अब जरा उसके भीतर के पिण्डों का हाल सुन लीजिये। इसमें छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े पिण्ड वर्तमान हैं। हमारे लिए पृथ्वी कितनी बड़ी है, परन्तु इस पृथ्वी के समान १३ लाख पृथ्वी हों तब कहीं सूर्य के बराबर पिण्ड बन सके। और इस सूर्य से लाखों गुना बड़े सूर्य इस अनन्त विश्व में वर्तमान हैं। इस प्रकार हमारी पृथ्वी की अपेक्षा चन्द्रमा छोटा है—चन्द्रमा पृथ्वी की अपेक्षा $\frac{1}{49}$ गुना छोटा है। कहते हैं कि इस चन्द्रमा से भी बहुत छोटे-छोटे पिन्ड अवान्तर ग्रहों में हैं जिनका व्यास १० मील से भी कम है, जो स्वयं स्वतंत्र रूप से अन्य ग्रहों की तरह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं। इस प्रकार हमारे इस विश्व में छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े पिण्ड वर्तमान हैं। प्रश्न होता है इस विचित्र विश्व की रचना कैसे हुई? इस विराट और वामन सृष्टि का रहस्य क्या है?





एक नीहारिका

ज्योतिषी कहते हैं कि इस प्रकार की नीहारिकाएँ एक-एक विश्व हैं।

२—विश्व का विकास

१—**सब से पुराना प्रश्न**—अत्यन्त प्राचीन काल ही से मनुष्य सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में जिज्ञासा करता आया है। प्राचीन समय के प्रायः सभी सभ्य जातियों ने इस प्रश्न पर विचार किया था और उन्होंने अपनी-अपनी योग्यता और पहुँच के अनुसार इस प्रश्न का उत्तर देने की चेष्टा की थी। संसार के सभी पुराणों ने सृष्टि की उत्पत्ति की भाँति-भाँति की कल्पनाएँ की हैं। हिन्दू पुराणों में सृष्टि की कथा इस प्रकार मिलती है। कहते हैं कि अनन्त और अपार क्षीर सागर में शेषनाग की शय्या पर विष्णु भगवान शयन कर रहे थे। उनकी नाभि से एक कमल निकला, उस कमल पर

चतुर्भुज ब्रह्मा प्रकट हुए। कमल नाल की जड़ का पता लगाने के लिए ब्रह्मा नीचे उतरे। सहस्त्रों वर्ष तक वे उतरते ही चले गये पर वे उस कमल-नाभि वा उसकी जड़ तक नहीं पहुँच पाये तब वे लौट कर फिर कमल पर आ गये और तपस्या करने लगे। उसी समय मधु और कैटभ नामक दो महा-दैत्य उपस्थित हुए। शक्ति देवी की माया से दोनों लड़ते-लड़ते मर गये। उनके मेद वा चर्बी से मेदनी बनी जिसे हम पृथ्वी कहते हैं। इसी प्रकार यूनान देश वालों की अपनी कल्पना है। उसके अनुसार उरण (Uranus) नामक देवता ने स्वयं और उसके वंशजों ने मिल कर सृष्टि की रचना की। बाद में अन्य देवताओं ने उसे बसाया।

२–पुरानी कल्पनाएँ—ईसा के छः शताब्दी पहले थेल्स नामक विचारक ने ज्योतिषसंबंधी बहुत सी नयी खोज की परन्तु उसका भी विश्वास था कि पृथ्वी पानी के ऊपर तैर रही है और तारे स्वत: चमकनेवाले पिण्ड हैं, परन्तु चन्द्रमा को सूर्य से प्रकाश मिलता है। सृष्टि के विषय में उसका विचार था कि 'यह अनित्य है।'

प्राचीन यूनानी दर्शिनिकों का कहना था कि पदार्थ चार हैं—पृथ्वी, वायु, अग्नि, और जल। इनके गुण क्रमशः शीत, सूखापन, गरमी और गीलापन है। अरस्तू के अनुसार बिना किसी पदार्थ के किसी वस्तु की उत्पत्ति असम्भव है और इसीलिए इस सृष्टि की उत्पत्ति बिना किसी पदार्थ के होना असम्भव है। उसके मत के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति इन्हीं पदार्थों के मेल से हुई है।

३—विश्व-विकास के प्राचीन सिद्धान्त—आज-कल तो विज्ञान की सहायता से हम विश्व के विषय में बहुत-कुछ बातों का पता लगा चुके हैं, परन्तु आज से पहले जब विज्ञान की इतनी उन्नति नहीं हुई थी, तब लोग अनुभव के अतिरिक्त अपनी



कोपरनिकस

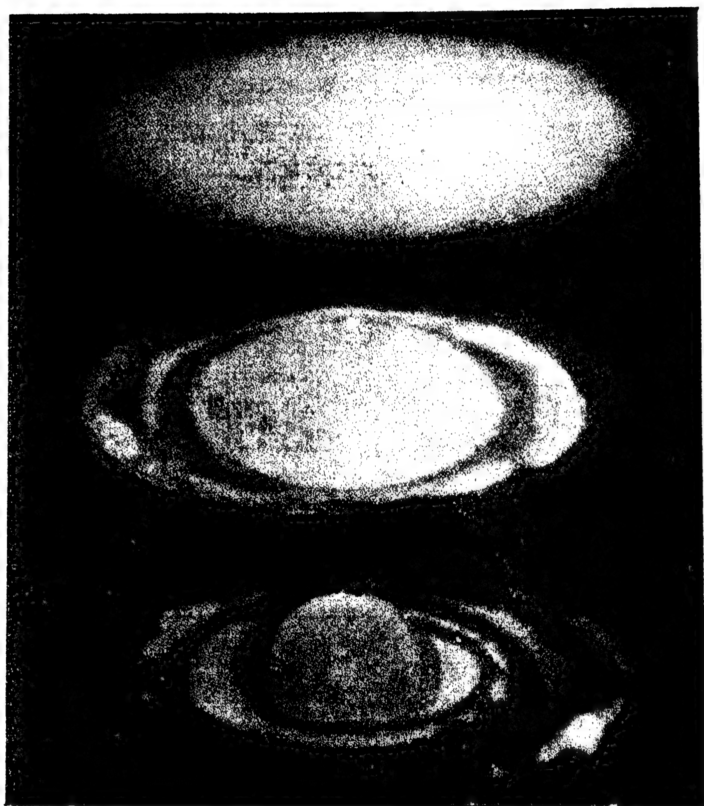
कल्पना से अधिक काम लेते थे। एक समय था, जब लोग समझते थे कि पृथ्वी की ही चारों ओर खगोल चक्कर लगा रहा है और पृथ्वी अचल है। पाश्चात्य देशों में पहले-पहल कोपरनिकस

(Copernicus) ने सन् १५४५ में इस पुराने विचार में परिवर्तन किया। उसने यह माना कि ऐसा नहीं हैं—वरन् सूर्य के चारों ओर ग्रह भ्रमण करते हैं और हमारी पृथ्वी भी उनमें से एक है। धीरे-धीरे ज्ञान बढ़ता गया और सौर-जगत् के विषय में लोग पूर्ण रूप से अभिज्ञ होते गये। अब उन्हें इस बात को जानने की इच्छा हुई कि इन आकाशीय पिण्डों की उत्पत्ति कैसे हुई ?

सूर्य अत्यन्त दीप्तिमान है, इसी से हमें गरमी और रोशनी मिलती है अतः पहले-पहल इसी की ओर लोगों का ध्यान गया। सन् १७९६ में फ्रांस निवासी लापलास (Laplace) ने अपनी कल्पना और तर्कबुद्धि से यह सिद्ध किया कि समस्त सौर-जगत् की उत्पत्ति सूर्य से ही हुई है। उसने इस आधार पर सोचना आरम्भ किया कि यह सूर्य बहुत दिनों से हमें प्रकाश और ताप देता आया है, और प्रकाश और ताप के निकलने से पदार्थ अवश्य छोटा होता है, अतः यह सूर्य जैसा हमें आज दिखाई पड़ता है, वैसा पहले न रहा होगा—वरन् इस सूर्य का आकार बहुत बड़ा रहा होगा। सूर्य का महान् आकार प्राचीन



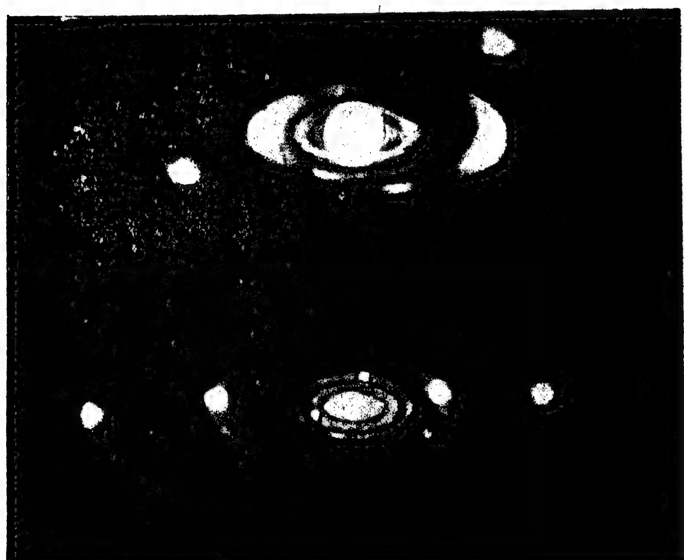
लापलास



लापलास के अनुसार विश्व का विकास (क)

लापलास के अनुसार आरम्भिक सूर्य गैस के रूप में था, और उसका विस्तार समस्त वर्तमान सौर-जगत् तक था। ज्यों-ज्यों वह छोटा होता गया उसकी भ्रमण-गति बढ़ती गयी।

समय में तेज़ी से भ्रमण करता रहा होगा और उसके शरीर से भाग कट-कटकर अलग-अलग ग्रह बन गये होंगे। इस प्रकार लापलास (Laplace) के मत से उस महान् सूर्य के शरीर से उस के नौ ग्रह-उपग्रह आदि बने, जिसमें हमारी धरती भी एक है।



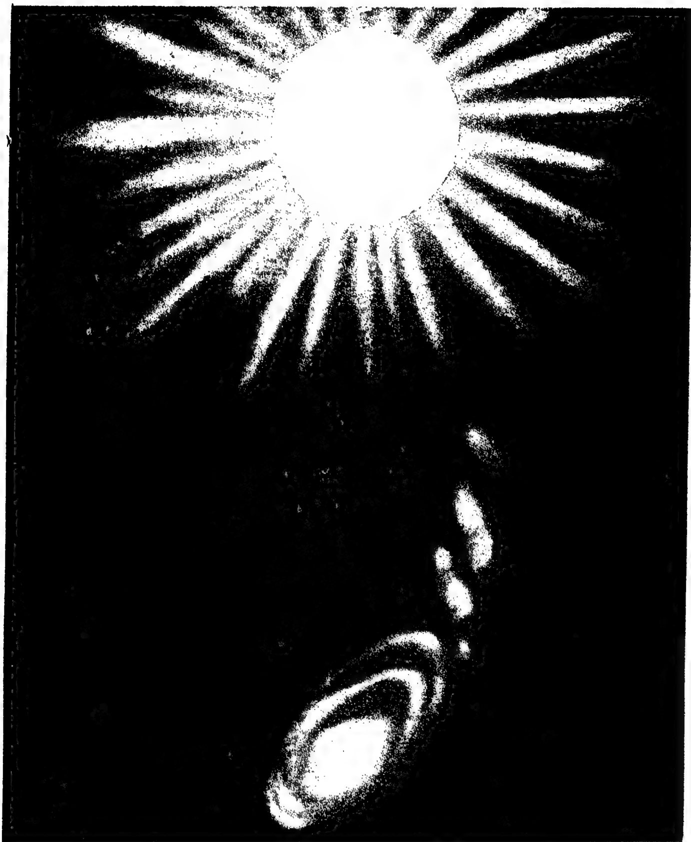
लापलास के अनुसार विश्व का विकास (ख)

सूर्य में गुरुत्व-आकर्षण-शक्ति वर्तमान थी, जिसके कारण उसके पिण्ड से छिटका हुआ भाग दूर निकल जाने के बदले उसके चारों ओर घूमने लगा।

लापलास के अनुसार आरम्भिक सूर्य गैस के रूप में था, और उसका विस्तार समस्त वर्तमान सौर-जगत् तक था। ज्यों-ज्यों

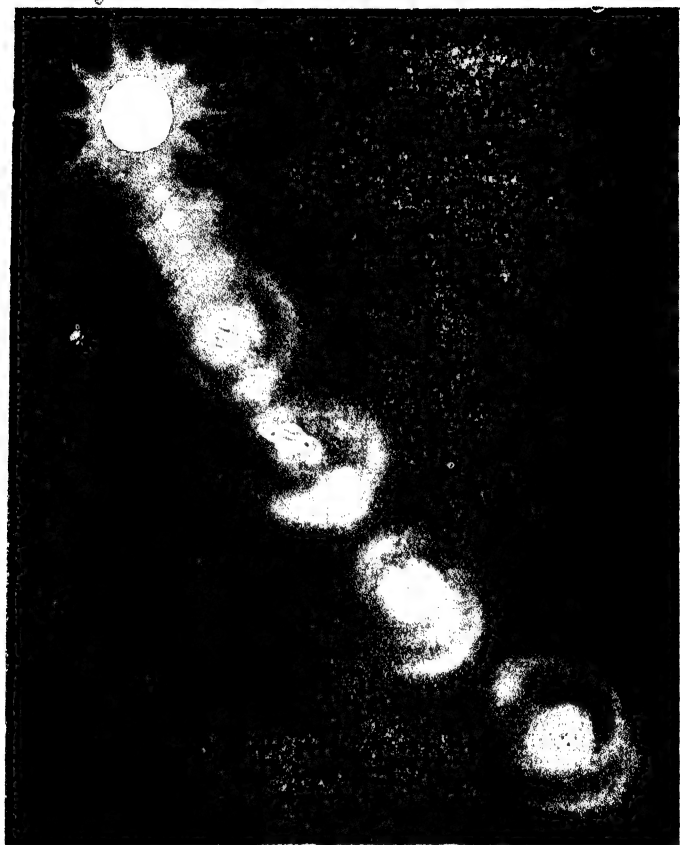
वह छोटा होता गया, उसकी भ्रमण-गति बढ़ती गयी। गति में ज्यों-ज्यों वृद्धि होती गयी, उसके शरीर से ग्रह आदि इस भाँति छिटक कर अलग हो गये, जैसे बाइसिकिल के पहिये को ज़ोर से घुमाने पर उसके टायर में लगी गीली मिट्टी छिटक कर दूर हो जाती है! परन्तु सूर्य में आकर्षण-शक्ति वर्तमान थी, जिसके कारण उसके पिण्ड से छिटका हुआ भाग बहुत दूर न जा सका और उसके साथ चारों ओर घूमने लगा और साइकिल के पहिए से निकली हुई मिट्टी की तरह उससे अलग नहीं हो गया।

४—**अन्य मत**—लापलास के सिद्धान्त में लोगों को आगे चल कर बहुत-सी शंकाएँ होने लगीं। केवल तीन वर्ष के बाद ही, चेम्बरलिन और मोल्टन (Chamberlin and Moulton) ने यह मत निश्चय किया कि इतना तो सच है कि ग्रहों की उत्पत्ति प्रारम्भिक सूर्य से हुई, परन्तु सूर्य के कुछ भाग का उससे अलग होने का कारण किसी पिण्ड की आकर्षण-शक्ति रही होगी। यदि सूर्य ही अकेले होता, तो उसका कोई भाग उससे अलग न होता और यदि ऐसा होता भी, तो उसके भाग से बने समस्त पिण्ड एक ही गति (सूर्य की गति) से अपनी धुरी पर भ्रमण करते, और सो भी एक ही दिशा में; परन्तु ऐसा देखा नहीं जाता। सूर्य के ग्रहों में कुछ ग्रह सूर्य से अधिक तेज़ी से अपनी धुरी पर भ्रमण करते हैं, और उनके कुछ उपग्रह ऐसे भी हैं, जो सूर्य के विपरीत दिशा में भ्रमण करते हैं। ऐसी दशा में यह प्रतीत होता है कि सूर्य के भीतर, किसी बाहरी पिण्ड



सौर-जगत् की सृष्टी (क)

सूर्य के पास से कोई दूसरा सूर्य या तारा निकला होगा व स्वयं सूर्य आकाश प्रदेश में भ्रमण करता हुआ किसी ऐसे तारे के समीप से गुज़रा होगा, जिसके कारण उस के पिण्ड के वाष्प-समूह में उथल-पुथल हुआ होगा, और उस गैस या वाष्प से पूर्ण सूर्य के पिण्ड से एक भुजा उस समीप के तारे की ओर आकृष्ट हो उठी होगी।



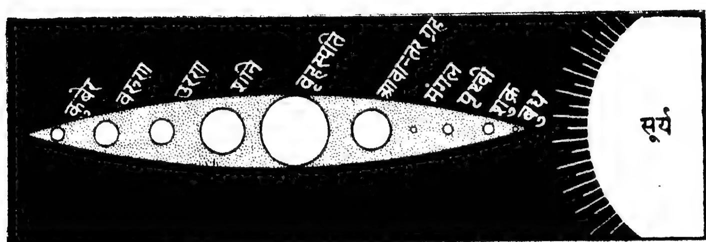
सौर-जगत् की सृष्टि (ख)

कालान्तर में सूर्य की यह भुजा उससे बाहर हो गयी और नवागन्तुक तारे के दूर हो जाने पर उस भुजा के गैस से उत्पन्न ग्रह-उपग्रह सूर्य के आकर्षण के कारण उसके चारों ओर चक्कर लगाने लगे।

के गुरुत्व-आकर्षण के कारण भारी उपद्रव उत्पन्न हुआ होगा, जिसके कारण उसके पिण्ड का कुछ भाग उससे बाहर निकल कर कालान्तर में ग्रहों के रूप में परिणत हुआ होगा। चेम्बरलिन और मोल्टन ने यही सिद्धान्त निश्चय किया कि सूर्य के पास से कोई दूसरा बड़ा सूर्य या तारा निकला होगा वा स्वयं सूर्य आकाश-प्रदेश में भ्रमण करता हुआ किसी ऐसे तारे के समीप से गुज़रा होगा, जिसके कारण सूर्य में के गैस-समूह में उथल-पुथल हुआ होगा, और उस गैस से एक भुजा उस समीप के तारे की ओर आकृष्ट हो उठी होगी। कालान्तर में सूर्य की यह भुजा टूट कर अलग हो गयी और नवागन्तुक तारे के दूर हो जाने पर इस भुजा के पदार्थ से उत्पन्न ग्रह-उपग्रह सूर्य के आकर्षण के कारण उसके चारों ओर चक्कर लगाने लगे। इस प्रकार सौर-जगत् की सृष्टि हुई।

५—सौर-जगत् की उत्पत्ति—चेम्बरलिन और मोल्टन के सिद्धान्त पर पीछे लोगों ने और प्रकाश डालना आरम्भ किया। अब वैज्ञानिकों का कहना है कि बहुत दिन हुए सूर्य के समीप से एक महान तारा गुज़रा। उसकी निकटतम दूरी भी कई लाख मील से कम न रही होगी। ज्योतिषियों का कहना है कि यदि वह तारा हमारे सूर्य से ५०,००,००० मील की दूरी पर रहा होगा तो भी उसकी ज्वार-उठाने-की-शक्ति चन्द्र की आकर्षण-शक्ति से १६,००० गुना अधिक रही होगी। इस प्रकार दोनों सूर्य्यों की खींचातानी में हमारे सूर्य में से दीर्घाकार

भुजाएँ निकली होंगी। चेम्बरलिन और मोल्टन (Chamberlin aud Moulton) का अनुमान है कि संभवत: ये भुजाएँ दो थीं जो सूर्य के कटिभाग के दोनों बग़ल से निकली होंगी और सूर्य के साथ भ्रमण करने लगी थीं। नवागन्तुक नक्षत्र के कारण ये भुजाएँ फिर सूर्य के पिण्ड के भीतर नहीं समा सकीं। इन



ग्रहों की उत्पत्ति

नवागन्तुक नक्षत्र के कारण जो भुजाएँ सूर्य के वाष्प-पिण्ड से निकलीं उन दोनों के मिलने से जो आकार बना था वह 'सिगार' की शक्ल का था। बहुत काल के पश्चात् इस वाष्प खण्ड के परमाणु घनीभूत होने लगे और उनके घनीभूत होने के कारण सौर-परिवार के ग्रह उप-ग्रह आदि बने। यदि सूर्य के ग्रहों को हम क्रम से एक पंक्ति में रख दें तो उनका आकार 'सिगार' सा ही बनता है।

भुजाओं के मिलने से जो आकार बना था वह 'सिगार' की शक्ल का था। नवागन्तुक सूर्य के चले जाने पर भी यह सिगार के आकार का वाष्प-खण्ड फिर उसी प्रकार सूर्य के साथ भ्रमण करता रहा। बहुतकाल के पश्चात् इस वाष्प-खण्ड के परमाणु घनीभूत होने लगे और उनके घनीभूत होने के कारण सौर-

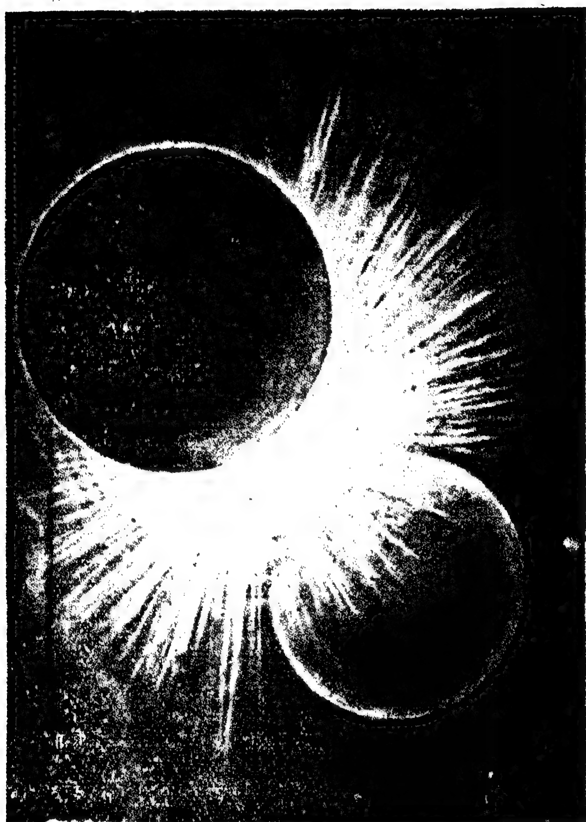
परिवार के ग्रह-उपग्रह आदि बने। सर जेम्स जीन्स (Sir James Jeans) महोदय का मत है कि सिगार के आकार को एक ही भुजा थी और उसी से ग्रह-उपग्रह आदि की उत्पत्ति हुई। यदि सूर्य के ग्रहों को हम क्रम से एक पंक्ति में रख दें तो उनका आकार 'सिगार' सा ही बनता है। इस लिए जेम्स जीन्स महोदय का सिद्धान्त आजकल मान्य समझा जाता है। परन्तु हाल ही में कुछ लोग इस सिद्धान्त में भी शंकाएँ उपस्थित करने लगे हैं। सन् १९३२ में रेवरेन्ट जार्ज्स लिमेत्रे (Rev. Georges Lemaitre) ने एक नया मत उपस्थित किया है। वे कहते हैं कि आज से ५०,००,००,००,००,००० वर्ष पूर्व विश्व में समस्त पदार्थ एक बड़े रेडियो संचलित अणु के रूप में एकत्र हुआ। एकाएक इसमें विस्फोट हुआ और उस से, तारे, ग्रह, नक्षत्र, ब्रह्मांड आदि उत्पन्न हुए।

६—**विश्व का विकास**—रात के समय निर्मल आकाश में जगमगाते हुए तारों को देख कर हमारे मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि तारे कहाँ से आये—इनकी उत्पत्ति कैसे हुई? प्राचीन समय में लोग यही मानते थे कि ये तारे इसी तरह सदा से इसी प्रकार चमकते आ रहे हैं और इनका न आदि है न अंत। परन्तु आजकल का ज्योतिषी इस बात को जानता है कि इन तारों का विश्व भी अन्य सजीव प्राणियों की तरह जीवन-मरण के अकट नियम से परे नहीं हैं। ये तारे भी उत्पन्न होते हैं मरते हैं। अब प्रश्न होता है कि इन तारों की उत्पत्ति कैसे हुई? ये

कहाँ से आये ? कहते हैं कि संभवतः किसी समय समस्त विश्व एक प्रकार की गैस के मेघ-मण्डल-सा था। यह मेघ-पुंज असंख्य वर्षों में धीरे-धीरे घनीभूत होकर आकाश के प्रान्तों में एकत्र हुआ इसी से तारों की उत्पत्ति हुई। यह अनुमान मात्र है परन्तु ज्योतिषी आज भी आकाश प्रान्त में स्थल-स्थल पर इस प्रकार के गैस के बादलों को दूरबीन से देख सका है जहाँ संभवतः सूर्य और विश्वों का विकास हो रहा है। इन गैस के बादलों को नीहारिका या Nebule कहते हैं। इस प्रकार की कुछ नीहारिकाएँ इतनी बड़ी देखी गयी हैं जिनके एक कोने में हमारा समस्त नक्षत्र मण्डल समा सकता है। इनमें कुछ नीहारिकाएँ तो केवल गैस के बादलों के रूप में हैं कुछ का आकार पहिए की तरह कुण्डलाकार है। इन्हीं कुण्डलनी निहारिकाओं से संभवत्रः तारों और ब्रह्माण्डों की सृष्टि हुई है।

इस विश्व में समय की गिन्ती नहीं है। लाखों वर्षों का समय कुछ नहीं के बराबर है। करोड़ों वर्षों में ये गैस के बादल सूर्य और ब्रह्मांडों के रूप में परिवर्तित हो पाते हैं। ज्योतिषियों का विश्वास है कि ये सर्पिल (Spiral) नीहारिकाएँ भ्रमण करती रहती हैं इनके गैस के अणु धीरे-धीरे इनके नाभि में गुरुत्वाकर्षणशक्ति के कारण एकत्र होकर घनीभूत होने लगते हैं। धीरे-धीरे वे ठोस पिण्ड का आकार धारण करने लगते हैं। यही कालान्तर में तप्त होकर तारों की भाँति चमकने लगते हैं।

ज्योतिषी कहते हैं कि इस प्रकार की नीहारिकाएँ एक एक विश्व



इस तरह आकाश में भ्रमण करते हुए दो पिण्ड जब आपस में लड़ जाते हैं तब वाष्प निकल कर आकाश में फैल जाता है जिससे आगे चलकर अन्य पिण्ड बनते हैं।

हैं और इस प्रकार की असंख्य नीहारिकाएँ आकाश प्रदेश में

बिखरी पड़ी हैं। इसी तरह की किसी एक नीहारिका से हमारे सूर्य का जन्म हुआ है।

७—शंका समाधान—यदि यह मान लिया जाय कि तारों का जन्म नीहारिकाओं से होता है तब यह प्रश्न उठता है कि नीहारिकाओं का जन्म कैसे होता है? क्या नीहारिकाएँ अब भी बनती रहती हैं? ज्योतिषी कहता है कि इस विश्व में कोई वस्तु स्थिर नहीं है, विकास का चक्र सदा चलता ही रहता है। सृष्टि और लय का क्रम कभी रुकता नहीं है। तारे उत्पन्न होते और नष्ट होते रहते हैं। हमारी आखों के सामने केवल चमकदार नक्षत्र दिखाई पड़ते हैं परन्तु कितने ऐसे भी होंगे जिनमें प्रकाश नहीं है, जिनका ताप लुप्त हो चुका है। ऐसे तारे द्रुतिगति से शून्य में सीधी रेखा में चलते रहते हैं। कभी-कभी इस प्रकार के दो पिण्डों का आपस में टक्कर हो जाना असंभव नहीं है। इस प्रकार के टक्कर का परिणाम यह होता है कि दोनों के पिंड के टक्कर से भीषण ताप उत्पन्न होता है और उसके कारण उनके पिंड का पदार्थ वाष्प या गैस के मेघ के रूप में आकाश में बिखर जाता है। कालान्तर में यही भ्रमण करता हुआ नीहारिका के रूप में हो जाता है।

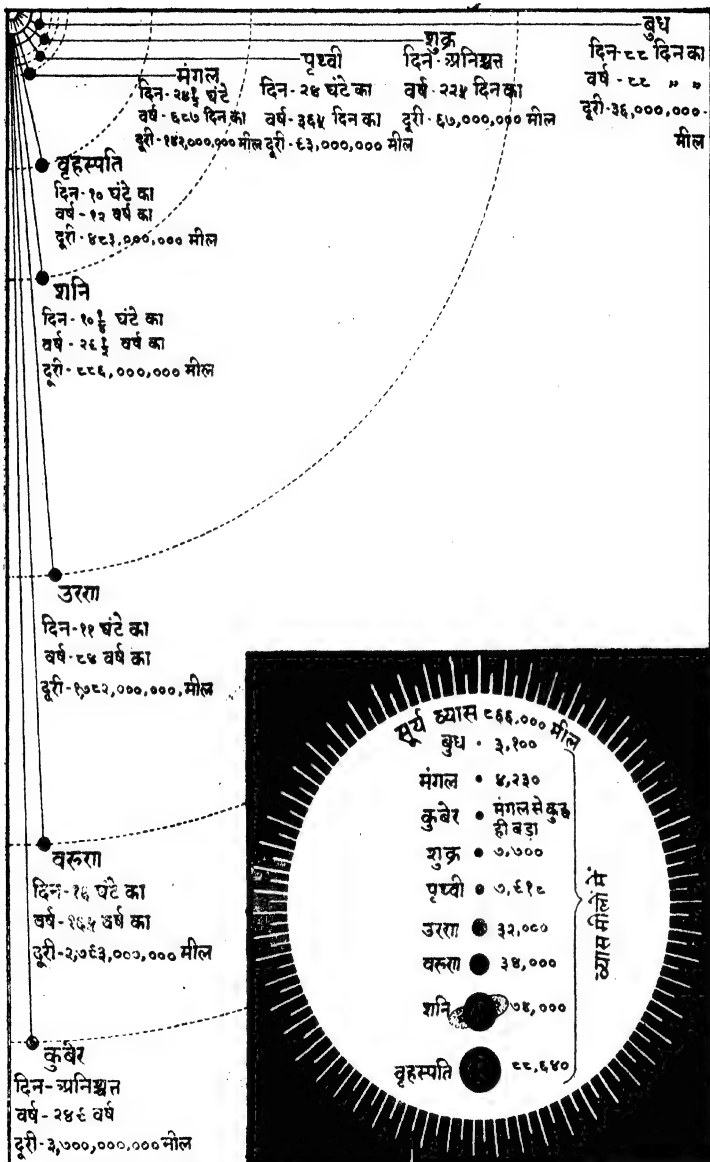
८—अनुमान का आधार—इस प्रकार के अनुमान का आधार क्या है। ज्योतिषी कहते हैं कि कभी-कभी आकाश प्रान्त में जहाँ पहले कोई तारा नहीं था वा कोई धुंधला तारा था वहाँ एकाएक एक अत्यंत चमकदार तारा जगमगाने लगता है। कुछ दिनों तक यह अत्यन्त प्रकाश से चमकता रहता है फिर धीरे

और प्रकाश कम होने लगता है और वह आँखों को नहीं दिखाई पड़ता परन्तु जब उसे दूरबीन से देखते हैं तो उस स्थान पर एक तारा गैस के बादलों में घिरा हुआ दिखाई पड़ता है। इस प्रकार के अनेक नये तारे बनते देखे गये हैं। इसी से अनुमान होता है कि इस प्रकार दो पिंडों के टकराने से नये तारों को जन्म देने वाली नीहारिकाओं के लिए गैस-मेघ-मंडलों की सामग्री उपस्थित होती है।

९—**इसका प्रमाण**—विश्व का विकास किस-किस अवस्थाओं में होकर हुआ इसे कौन साक्षात कर सका है। इसके लिए असंख्य वर्ष लगते हैं इतने दिनों कौन जीता रह सकता है। परन्तु यदि हम किसी एक वस्तु के आरंभ से अंत तक की अवस्थाओं को नहीं देख सकते तो क्या उसी जाति की अनेक वस्तुओं की भिन्न-भिन्न दशाओं को देखकर हम उस वस्तु के क्रमिक विकास के इतिहास का अनुमान नहीं लगा सकते ? मान लिया कि आपने अपनी आँखों से किसी वृक्ष का बीज से उत्पन्न होकर फल देने लगना एक साथ नहीं देख सके तो क्या उसी जाति के वृक्षों की अनेक अवस्थाओं को देख कर आप उस वृक्ष के सम्पूर्ण जीवन के इतिहास की कल्पना नहीं कर सकते ? इसी तरह हम आकाश प्रदेश में ज्योतिषी पिंडों की अनेक अवस्थाओं का साक्षात् कर इस परिणाम पर पहुँचता है कि सूर्य की उत्पत्ति कैसे हुई होगी, ग्रहों की उत्पत्ति कैसे हुई होगी, सौर-जगत कैसे बना हुआ है, सौर विश्व का विकास कैसे होना संभव है।



३


बुध
दिन-८८ दिन का
वर्ष - ८८ " "
दूरी-३६,०००,०००-
मील
शुक्र
दिन-अनिश्चित
वर्ष-२२५ दिन का
दूरी-६७,०००,००० मील
पृथ्वी
दिन-२४ घंटे का
वर्ष-३६५ दिन का
दूरी-९३,०००,००० मील
मंगल
दिन-२४½ घंटे
वर्ष-६८७ दिन का
दूरी-१४२,०००,००० मील
वृहस्पति
दिन-१० घंटे का
वर्ष-१२ वर्ष का
दूरी-४८३,०००,००० मील
शनि
दिन-१०¼ घंटे का
वर्ष-२९½ वर्ष का
दूरी-८८६,०००,००० मील
उरुरा
दिन-११ घंटे का
वर्ष-८४ वर्ष का
दूरी-१,७८२,०००,०००,मील
वरुरा
दिन-१६ घंटे का
वर्ष-१६५ वर्ष का
दूरी-२,७९३,०००,००० मील
कुबेर
दिन-अनिश्चित
वर्ष-२४९ वर्ष
दूरी-३,७००,०००,००० मील
सूर्य व्यास ८६६.००० मील
बुध ३,१००
मंगल ४,२३०
कुबेर मंगल से कुछ ही बड़ा
शुक्र ७,७००
पृथ्वी ७,९१८
उरुरा ३२,०००
वरुरा ३४,०००
शनि ७४,०००
वृहस्पति ८८,६४०
व्यास मीलों में



सर्पिल नीहारिका

इस प्रकार की नीहारिकाओं से संभवत: सौर-परिवार की सृष्टि हुई थी।

३—सौर-परिवार

१—**हमारा पता ठिकाना**—हमारा निकटतम संबंध सूर्य से ही है। यदि सूर्य आज न रहे तो हमारी पृथ्वी बर्फ से भी अधिक ठंडी हो जाय और इस पर के समस्त चर, अचर प्राणी प्राण-हीन हो जायँ। सूर्य के न रहने पर पृथ्वी आकाश में सीधी रेखा में भाग निकलेगी। संभव है, वह भागती हुई किसी अन्य पिण्ड से टकरा कर वाष्प या गैस रूप में आकाश में बिखर जाय। अब यह स्पष्ट है कि सूर्य ही हमारी पृथ्वी तथा उस पर के जीवन का आधार है। इसी कारण हम कहते हैं कि सूर्य ही से हमें सब से अधिक सरोकार रहता है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ने सूर्य की उपयोगिता समझी थी और इसी लिए केवल हमारे यहाँ ही नहीं वरन् संसार की बहुत सी अन्य जातियों ने भी सूर्य को देवता माना है। अब हम इस सूर्य और उसके परिवार का पता-ठिकाना जानना चाहेंगे। बात यह है कि किसी का परिचय

प्राप्त करने के पहले यह जानना परम आवश्यक होता है कि वह व्यक्ति रहता कहाँ है।

हमारा सूर्य अपने परिवार के साथ आकाश के जिस भाग में रहता है उसे हम सौर-जगत् वा सौर-ब्रह्माण्ड कह सकते हैं। यदि आकाश की कोई चौहद्दी होती, तो हम यह बता सकते कि सूर्य और उसका परिवार उसके अमुक कोने में वर्तमान है। परन्तु आकाश का ओर-छोर अभी तक देखा नहीं गया, इस लिए उसकी चौहद्दी कोइ नहीं बता सकता। चौहद्दी के अभाव में हम अपने सूर्य ही को केन्द्र मान कर उसके परिवार का पता ठिकाना मानेंगे। परन्तु इस आकाश में सूर्य के समान अनेक सूर्य हैं, उसके ब्रह्माण्ड के समान अनंत ब्रह्माण्ड हैं। कहते हैं कि हमारा सौर-जगत् वा ब्रह्माण्ड उस महान नीहारिका के किसी भाग में है जो आकाश-गङ्गा वा 'डहर' से घिरा है। यदि आप रात में आकाश को देखें तो आप को एक धुंधली, उजली 'डहर' दिखाई पड़ेगी—उसी को 'आकाश-गङ्गा' कहते हैं। इसी डहर से घिरी हुई नीहारिका के एक भाग में सूर्य अपने परिवार के साथ स्थित है। यदि इस महान आकाश सागर के नक्शे में हम सौर-जगत् को ढू ंढने लगें तो वह एक अत्यंत छोटे द्वीप के समान जान पड़ेगा जिसे ढूंढ निकालने में हमें बहुत ही कठिनाई होगी।

२—**विराट्-विश्व**—क्षण भर के लिए इस विराट् विश्व की विराट्ता की कल्पना कर लीजिए! फिर आप को अपने सौर-जगत् वा ब्रह्माण्ड की क्षुद्रता का अनुमान हो सकेगा। आप किसी

गाँव में रहते हैं, तो उस से बड़ी तहसील होगी। तहसील से बड़ा ज़िला। इस तरह के बहुत ज़िले मिल कर एक सूबा बनता है। फिर सूबों से मिल कर देश, देशों से मिलकर महाद्वीप। इस तरह के कई महाद्वीप इस पृथ्वी पर हैं। हमारी पृथ्वी हमारे गाँव की अपेक्षा कितनी बड़ी है ! हमारे लिए यही अगम्य अगोचर हो रही है। परन्तु इस पृथ्वी के बराबर १३ लाख पृथ्वी हों तब कहीं हमारे सूर्य के बराबर पिण्ड बन सकेगा ! परन्तु इस सूर्य से हजारों लाखों गुना बड़े सूर्य इस विराट् विश्व में वर्तमान हैं। कहते हैं कि Betelgeuze नामक तारा सूर्य से २,७०,००,००० गुना बड़ा है। इस प्रकार के एक से एक बड़े सूर्य इस विश्व में हैं। इस अनंत विश्व में, इन विश्वों के अनेक समूह में, इन अनंत ब्रह्माण्डों के बीच में हमारा सौर-ब्रह्माण्ड है जिस में सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने वाले ग्रह हैं जिन के अपने उप-ग्रह भी हैं।

३—**सौर-परिवार**—सूर्य को हम नित्य देखते हैं। हमारी पृथ्वी उसी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है। हमारी पृथ्वी जैसे और आठ ग्रह उस सूर्य के चारों ओर घूमते रहते हैं। इन के नाम क्रम से बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, उरण, वरुण और कुबेर हैं, जिसे यम भी कहते हैं। यदि इस सौर-ब्रह्माण्ड के आर पार जाना चाहें तो आप को करीब ७,६०,००,००,००० मील जाना होगा। यह दूरी कितनी होगी ? कहते हैं कि यदि तोप का गोला अपनी पूरी तेज़ी से इसे पार करना चाहे तो उसे ७०० वर्षों से अधिक लग जायँगे !

इस सौर-परिवार में सभी प्रकार के पिंड हैं—छोटे बड़े, ठंढे गरम। आपने पिछले अध्याय में देखा है कि सौर-परिवार की उत्पत्ति कैसे हुई है। अब प्रश्न होता है कि एक साथ ही उत्पन्न होने पर उसके परिवार के लोगों की दशा एक सी क्यों नहीं है? बात यह है कि जो इनमें छोटे हैं वे अपनी गरमी जल्दी खो बैठे हैं और वे शीघ्र ही ठंढे हो गये हैं। जो बड़े हैं उन में अभी ताप वर्तमान है।

४–ग्रह-परिचय—आप जानते हैं ग्रह हम किसे कहते हैं? वे पिंड जो सूर्य के चारों ओर घूमते रहते हैं ग्रह कहलाते हैं। वे स्वतंत्र पिंड नहीं हैं वरन दूसरे के अधीन हैं। सूर्य इन ग्रहों के लिए केन्द्र है और सूर्य स्वयं ४०,००,००,००० मील प्रति वर्ष के हिसाब से अपने परिवार को साथ लिए हुए सीधी रेखा में चलता रहता है। कहते हैं सूर्य हर्क्यूलीज़ (Hercules) तारा-समूह की ओर जा रहा है। सूर्य के ग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं। वे स्वयं भी अपनी धुरी पर घूमते रहते हैं। उनके उप-ग्रह उनकी परिक्रमा करते हुए अपनी धुरी पर घूमते हैं।

५–सौर-परिवार—सूर्य के अत्यन्त निकट रह कर बुध उस की परिक्रमा करता है। उसके बाद शुक्र का नंबर आता है। शुक्र के बाद पृथ्वी आती है। उसके बाद मंगल की पारी आती है। यदि आप जानना चाहें, तो स्मरण रखें कि बुध सूर्य से लगभग ३,६०,००,००० मील की दूरी पर रहता है। शुक्र ६,७०,००,००० मील की दूरी पर भ्रमण करता है और पृथ्वी ९,३०,

००,००० मील पर। इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि ये ग्रह आपस में टक्कर नहीं खाते। मंगल हमारी धरती के बाद आता है। यह सूर्य से १४,२०,००,००० मील की दूरी पर रहता है। इसके बाद बृहस्पति ४८,३०,००,००० मील की दूरी पर रह कर प्रदक्षिणा करता है। शनि का नंबर इसके बाद है। वह सूर्य से ८८,६०,००,००० मील की दूरी पर रहता है। शनि के बाद उरण १,७८,२०,००,००० मील और वरुण २,७९,३०,००,००० मील की दूरी पर रहते हैं। इसके बाद सूर्य का अन्तिम ग्रह कुबेर है। वह सूर्य से ३,८०,००,००,००० मील की दूरी पर प्रदक्षिणा करता है। आप जानते हैं कि जिस मार्ग से ये ग्रह प्रदक्षिणा करते हैं उसे कक्षा या Orbit कहते हैं। उनकी दूरी के अनुसार ग्रहों की कक्षा बड़ी छोटी होती है। उनके प्रदक्षिणा-काल की अवधि में भिन्नता है। सूर्य की गृहस्थी में हमारी पृथ्वी का तीसरा स्थान है। इसे सूर्य की परिक्रमा करने में ३६५$\frac{१}{४}$ दिन लगते हैं, जिसे हम वर्ष कहते हैं। पृथ्वी की कक्षा से बुध और शुक्र की कक्षा अवश्य छोटी होगी क्योंकि वे सूर्य्य के निकट हैं, उसी तरह पृथ्वी की अपेक्षा-मंगल, बृहस्पति, शनि, उरण, वरुण कुबेर आदि की कक्षा क्रमशः बड़ी होती जायगी। इसका परिणाम क्या होगा ?

६–ग्रहों के वर्ष-मान में भिन्नता—आप समझ गये होंगे कि कक्षा की बड़ाई-छोटाई के हिसाब से परिक्रमा-काल में अन्तर पड़ता है। यदि आप पृथ्वी के वर्ष को 'नाप' समझ लें तो पृथ्वी

की अपेक्षा उस से बड़ी कक्षा वाले ग्रहों का वर्ष बड़ा होगा और उससे छोटी कक्षा वालों का छोटा। अब आप याद कर लें कि बुध का वर्ष केवल ८८ दिन का होता है, शुक्र का २२५ दिन का! इसकी अपेक्षा मंगल का वर्ष जिसकी कक्षा पृथ्वी से बड़ी है ६८७ दिनों का होता है। बृहस्पति पर एक वर्ष तो हमारे १२ वर्षों के बराबर होता है! और सुनिये! शनि का एक वर्ष हमारे ३० वर्षों के बराबर! आप इतने से न घबराएँ। उरण का वर्ष पृथ्वी के ८४ वर्षों के बराबर होता है! और सुनिये! वरुण पर का वर्ष हमारे १६५ वर्षों के बराबर होता है। कुबेर ने तो हद ही कर दी। उसका एक वर्ष हमारे २५० वर्षों के बराबर होता है!!! क्षण भर के लिए सोचिए तो कि जहाँ गरमी, बरसात जाड़ा आदि मौसिम २५० वर्ष में एक बार आते होंगे, वहाँ की क्या दशा होती होगी!

७––**ग्रहों के दिन मान**—अब जरा उन ग्रहों पर दिन कितने घंटों का होता है, इसे भी सुन लीजिए। आपने सोचा होगा कि दिन मान भी उनके वर्ष के अनुसार ही बड़ा छोटा होगा। पर आप का अनुमान गलत ठहरेगा। पहले इसे समझ लीजिए कि दिन होता क्यों है—आप कहेंगे ग्रह वा पिण्ड का कोई भाग जब सूर्य के सामने आता है तो दिन होता है और उसके दूसरे अर्ध भाग में जो सूर्य के विमुख रहता है, रात रहती है। परन्तु हम यह नहीं पूछते। हम पूछते हैं दिन-रात होती ही क्यों हैं। आप कहेंगे पिण्ड के अपने अक्ष या धुरी पर घूमने के कारण

ठीक, परन्तु दिन मान छोटा-बड़ा क्यों होता है ? आप कहेंगे पिण्ड के अपने अक्ष पर घूमने की भिन्न-भिन्न गतियों के कारण ! ठीक है, यदि पृथ्वी और तेज़ी से घूमना आरंभ करे तो हमारा दिन मान १२ घन्टे से भी कम हो सकता है। यदि वह धीरे-धीरे घूमना आरम्भ करे तो संभव है हमारा दिन ४८ घन्टे से भी बड़ा हो जाय। अतः यह निश्चय हो गया कि पिण्ड की अपनी भ्रमण-गति के अनुसार उसका दिन-मान होगा। बुध का एक दिन हमारे ८८ दिनों के बराबर है। शुक्र पर करीब इतना ही बड़ा दिन होता है। मंगल का दिन हमारे दिन के लगभग बराबर ही है। परन्तु बृहस्पति का दिन १० घन्टे का है। शनि का १०$\frac{१}{४}$ घन्टे का, उरुण का दिन ११ घन्टे का, और वरुण का दिन १६ घन्टे का है। कुबेर का अभी हाल ही में पता चला है इस लिए उसके विषय में अभी कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

८---**ग्रहों का आकार**—सौर परिवार के इन नौ ग्रहों का आकार क्या है इसे भी समझ लेना आवश्यक है। आप जानते ही हैं कि सूर्य की अपेक्षा सभी छोटे ही होंगे, अन्यथा वे सूर्य के ग्रह क्यों बनते। सूर्य के समूचे पिण्ड के सामने यदि समस्त ग्रह एक साथ रख दिये जायँ, तो वे आयतन में $\frac{१}{७००}$ भाग मात्र ठहरेंगे ! अब उनके आपस की बड़ाई-छोटाई समझ लीजिए। आप पृथ्वी को मानदंड बना कर चलें। हमारी पृथ्वी का व्यास ७,९११ (करीब ८ हजार मील) है। शुक्र का व्यास करीब इसके बराबर है। बुध का व्यास पृथ्वी का आधा है। मंगल भी करीब

आधे से कुछ ज्यादा होगा। वृहस्पति का व्यास पृथ्वी से ११ गुना बड़ा है। शनि का व्यास पृथ्वी से करीब ९ गुना बड़ा है। उरण का व्यास हमारी पृथ्वी के व्यास से चौगुना है। वरुण का व्यास ३४,८३२ मील है जो करीब चौगुने से कुछ अधिक होता है। कुबेर का व्यास हमारी धरती के ही बराबर है अर्थात् ८००० मील। इनके परस्पर आकार को समझने के लिए आप पृष्ठ ३४ पर का चित्र देखें।





एक नीहारिका—इस प्रकार की नीहारिकाओं से संभवतः सौर-विश्व की सृष्टि हुई थी।

४—हमारा सूर्य

१—**महान सूर्य**—सूर्य जिसे आप नित्य देखते हैं—क्या आप उसके विषय में पूरी जानकारी रखते हैं? अच्छी बात है, तो पहले यह बतलाइए कि यह कितना बड़ा है? क्या आप मीलों में इसका व्यास जानना चाहते हैं? अच्छा, तो स्मरण रखिये कि यदि सूर्य को हम आरपार करना चाहें तो हमें ८,८०,००० मील तै करना पड़ेगा। प्रचन्ड ताप के कारण उसके पिन्ड के पदार्थ वाष्प अवस्था में हैं। सूर्य के इस महान गोले का अन्दाज़ शायद अभी आप को पूरा नहीं लग सका। अच्छा, तो यह समझ लीजिए कि सूर्य का व्यास हमारी धरती के व्यास का ११० गुना है। हमारी पृथ्वी का व्यास ७,९१८ मील है। यदि हम ११० पृथ्वी एक पंक्ति में रक्खें तो हम सूर्य को

आरपार कर सकते हैं। इस महान सूर्य के पिन्ड की महानता का अनुभव अभी पूर्णरूप से नहीं हो सका। एक बात और सुनिए, केवल सूर्य का पिन्ड इस अकाश में जितना स्थान ले रहा है उसमें हमारी पृथ्वी को केन्द्र मानकर चन्द्रमा बड़े मज़े में अपनी कक्षा पर भ्रमण कर सकता है और फिर भी वहाँ बहुत सा (करीब २,२०,००० मील) स्थान खाली पड़ा रहेगा ! यदि हम सूर्य के पिन्ड को दो टुकड़ों में बाँट सकें और उसे खाली कर प्याला बना सकें तो एक ही प्याले से हम पृथ्वी और चन्द्र—दोनों को ढँक सकते हैं। और दोनों उस के भीतर भ्रमण करते रहेंगे ! यदि हवाई जहाज़ सूर्य की परिक्रमा करना चाहे तो १०० मील प्रति घण्टे की गति से उसे पूरी परिक्रमा करने में तीन वर्ष से अधिक लगेंगे।

२—सूर्य—सूर्य कितना बड़ा है, इसका पूर्ण अनुमान हमें जल्दी नहीं होता। आप समझ लें कि यदि सूर्य के पिन्ड को हम फुटबाल की तरह खोखला कर दें तो उसे भरने के लिए हमारी धरती के समान १३ लाख पृथ्वी की ज़रूरत होगी। यदि कोई ठेकेदार सूर्य के बराबर पिन्ड बनाने का ठेका ले और प्रति घंटे वह पृथ्वी के बराबर मिट्टी एकत्र करा सके तो उस ठेकेदार को सूर्य के बराबर पिन्ड बनाने में १५० वर्ष से ऊपर लग जाँयगे ! गणितज्ञ कहते हैं कि सूर्य का तौल ३,३२,००० पृथ्वी के बराबर होगा ! सूर्य के समस्त ग्रह-उपग्रह आदि यदि उसके भीतर भर दिये जाँय तो भी सब को मिलाकर हम इस महान

पिन्ड का केवल $\frac{१}{७००}$ वाँ भाग ही भर सकेंगे ! इस महान पिन्ड के सामने हमारी धरती कुछ भी नहीं के बराबर है—तेरह लाख भाग में एक भाग होता ही कितना है ? पृथ्वी सूर्य के १३ लाखवें भाग के बराबर है। सूर्य का यह महान पिन्ड ठोस नहीं है, यह हम कह चुके हैं। इस कारण उसका वज़न हमारी पृथ्वी से १३ लाख गुना न होकर केवल सवा तीन लाख गुना ही है। आप जानते हैं कि सूर्य में ताप बहुत अधिक है। इस कारण वहाँ पर कोई पदार्थ ठोस दशा में नहीं है। इसीलिए सूर्य के अधिक विस्तार की तुलना में उसका वज़न कम है। सूर्य का वज़न कितना होगा ? २ अंक पर २७ सुन्न रखने पर जितना टन होता है उतना वज़न सूर्य का है ! बतलाइए कितने मन हुए ? एक टन २७ मन का होता है।

३--सूर्य्य के भीतर ?—यदि आप सूर्य को प्रातःकाल के समय देखें तो आपको स्पष्ट हो जायगा कि उसका आकार ठीक गोल है और उसके छोर पर उतनी चमक नहीं है जितनी कि बीच में। इसका कारण यह है कि सूर्य के पिन्ड का भीतरी भाग उसके बाहरी हिस्से से अधिक तप्त है। ज्योतिषी लोगों का कहना है कि सूर्य के भीतरी चमक से उसके किनारों की चमक केवल एक तिहाई रह जाती है।

ज्योतिषी लोगों ने सूर्य के तल की परीक्षा दूरबीन से की तो उन्हें सूर्य ऐसा दिखाई पड़ा जैसे किसी शोरवे से भरे प्याले में चावल डाल दिये गये हों और वे चमकते हुए तैर रहे हों। मतलब

यह है कि सूर्य के तल पर बहुत से चमकदार टुकड़े बिखरे से लगते हैं जिनमें प्रत्येक दाने या रवे का व्यास ४०० से ६०० मील तक का होगा। इससे यह प्रमाणित होता है कि सूर्य के तल का सब भाग एक सा नहीं चमकता वरन् उस पर बहुत से छोटे-छोटे टुकड़े हैं जो अधिक चमकते रहते हैं। इन टुकड़ों को अंग्रेजी में फेकुला (Facula) कहते हैं।

४--सूर्य की गति—आप सुन चुके हैं कि सूर्य हमारी धरती जैसा ठोस नहीं है। इसी कारण उसके पिण्ड के भाग अलग-अलग गति रखते हैं। जब परीक्षा की गयी तो मालूम हुआ कि सूर्य भी अपनी धुरी पर हमारी पृथ्वी की भाँति घूमता है परन्तु उसके सब भागों की गति समान नहीं है। सूर्य का कटि भाग तो २४½ दिन में एक चक्कर लगाता है। उसकी अपेक्षा उसके ध्रुव प्रदेश या यों कहें उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के निकट का प्रदेश २६½ दिन में घूमता है। उसके दोनों ध्रुव तो ३४ दिन में घूमते हैं। इस बात का पता उस समय लगता है जब हम सूर्य के कटि प्रदेश के धब्बों की गति का अध्ययन करते हैं।

५--सूर्य के कलंक—आप चौंक उठे होंगे कि सूर्य के संबंध में कलंक का ज़िक्र कैसे आया। आपने चन्द्र के कलंक की बात तो सुनी होगी, अब यह भी सुन लीजिए कि सूर्य में भी कलंक होते हैं। चन्द्र के धब्बे तो हमें बराबर दिखाई पड़ते हैं परन्तु सूर्य के पिंड के अत्यंत चकाचौंधकारी चमक के कारण हमारी

आँखों को उसके कलंक नहीं दिखाई पड़ते। यदि आप एक काले शीशे के टुकड़े द्वारा सूर्य को देखें तो बहुत संभव है आप



सूर्य के कलंक का एक चित्र

सूर्य के पिन्ड पर के काले धब्बों को देखेंगे। ये धब्बे प्रायः सदा ही इतने बड़े रहते हैं कि बिना दूरबीन के देखे जा सकें। सूर्य

के इन धब्बों का विस्तार पाँच सौ मील से लेकरए क लाख डेढ़ लाख मील तक का होता है। इन धब्बों का पता पहले पहल गैलीलियो ने अपने छोटी दूरबीन से लगाया था। अब तो प्रतिदिन इसकी जाँच हो रही है। धब्बे कैसे हैं—आप जानना चाहेंगे। सुनिए! प्रत्येक धब्बे के मध्य में एक काला भाग रहता है जिसे ज्योतिषी लोग परिछाया (Umbra) कहते हैं। इस काले दाग के चारों ओर का रंग हलका रहता है जिसे उपछाया (Penumbra) कहते हैं। यदि आप इन कलंकों का चित्र देखें तो इनका आकार उस तश्तरी-सा लगेगा जिसमें एक बीच का हिस्सा होता है और चारों तरफ 'बारी' या छिछला चक्र के आकार का भाग। अनुमान किया जाता है कि ये धब्बे काले नहीं है वरन् ऐसे इसलिए जान पड़ते हैं कि उनका प्रकाश अन्य भागों की अपेक्षा कुछ कम है। परीक्षा करने पर पता लगा है कि इन धब्बों में सूर्य के अन्य प्रकाशमान भागों की अपेक्षा तिहाई प्रकाश रहता है, इसीलिए उनका रंग काला दिखाई पड़ता है। अतः ये कम तप्त माने गये हैं।

६--कलंक क्या हैं—ये धब्बे हैं क्या? इस पर बहुत से लोग सिर मार रहे हैं। किसी-किसी का कहना है कि सूर्य का पिन्ड चूँकि अग्नि से भरा पड़ा है, इसमें प्रचन्ड ताप के कारण जब लहरें उठती हैं तो उसमें बड़े-बड़े भँवर भी पड़ते हैं। इन भँवरों के ही कारण हमें ये धब्बे दिखाई पड़ते हैं। इन भँवरों के केन्द्र भाग को हम परिछाया (Umbra) कहते हैं

और उसकी नाभि को घेरे हुए कुण्डली के आकार की उपच्छाया (Penumbra)। कुछ लोग इन धब्बों को गड्ढे मानते हैं। कुछ लोग उन्हें उभड़ा हुआ मानते हैं। इन कलंकों की आयु दो दिन से लेकर दो मास तक की होती है। एक बार तो एक कलंक १८ महीनों तक वर्तमान रहा। इन कलंकों के विषय में एक विचित्र बात देखी गयी है। ये कलंक केवल सूर्य के मध्य या कटि प्रान्त ही में दिखाई पड़ते हैं, उसके ध्रुव प्रदेशों में नहीं।

७-**चुम्बकीय आँधी**—जब सूर्य में कलंक बहुत दिखाई पड़ते हैं तब उनके कारण पृथ्वी पर 'चुम्बकीय आँधी' आती है। तार, रेडियो आदि विजली से काम करने वाली मशीनों में गड़बड़ी उत्पन्न होती है। उसके आधार पर यह निश्चित हुआ है कि ये कलंक 'चुम्बकीय' गुण रखते हैं और उन्हीं के कारण पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में उपद्रव उपस्थित होते हैं। इन कलंकों का प्रभाव हमारे ऊपर भी पड़ता है ऐसा भी लोगों का विश्वास था, परन्तु यह उसी तरह का विश्वास है जैसे हमारे देश में लोग ग्रहों की गति से अपने भविष्य का संबंध स्थापित करते हैं। विज्ञान अभी तक इन दोनों में कोई संबंध स्थापित नहीं कर सका।

८--**सूर्य का प्रकाश-मण्डल**—सूर्य का जो भाग हमें आँखों से दिखाई पड़ता है, उसे प्रकाश-मण्डल कहते हैं। इसे अंग्रेजी में Photosphere कहते हैं। इसका ताप अत्यन्त प्रचन्ड रहता है। यदि इसकी माप ली जाय तो शायद वह ५,५०,००,०००



सूर्य की रक्त ज्वालाएँ
कभी-कभी इनकी ऊँचाई सत्रा लाख मील तथा इससे भी अधिक देखी गई है ।

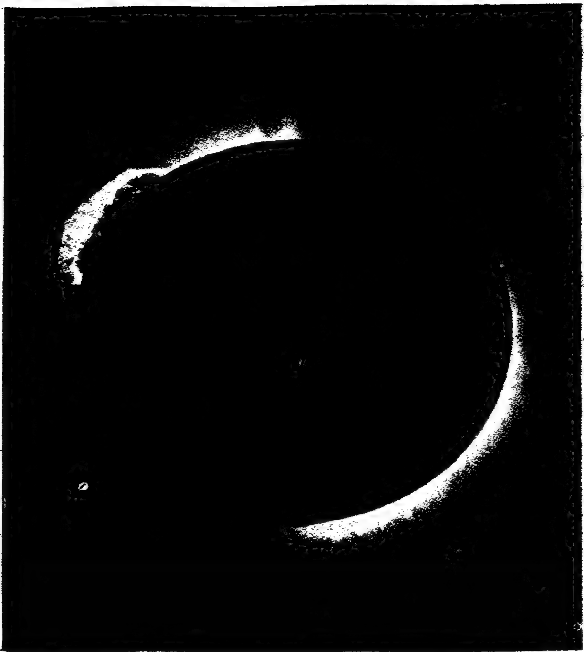
डिगरी सेन्ट्रीग्रेट्र (C) ठहरेगी। इस प्रचण्ड ताप का अनुमान आप को ऐसे हो सकता है। कहते हैं कि यदि हम सूर्य के समूचे पिण्ड को ५०० फुट मोटे बरफ़ की चादर से ढक सकें तो यह बरफ़ की चादर सूर्य की भयानक गरमी से केवल १० मिनट में गलकर पानी हो जायगी! और एक घंटे में तो वह सब पानी भाप बनकर उड़ जायगा! कहते हैं कि यदि सूर्य से निकलने वाली समस्त गरमी केन्द्रीभूत कर दी जाय तो ९,३०,००,००० मील लंबी २$\frac{1}{4}$ मील व्यास की बर्फ़ की चट्टान एक सेकेंड में गलकर पानी हो जायगी और आठ सेकेंड में भाप हो कर उड़ जायगी! जीन्स महोदय का कहना है कि यदि इस सूर्य के पिण्ड का एक पिन के सिरे के बराबर भाग हमारी धरती पर आ गिरे तो उसकी गरमी से १००० मील के इर्द-गिर्द की समस्त वस्तुएँ भस्म हो जायँ! अब ज़रा यह सुन लीजिए, जहाँ इतनी अधिक गरमी होगी वहाँ उसके कारण प्रकाश भी उतना ही होगा। सूर्य के प्रकाश की माप कितनी होगी? इसका अन्दाज़ लगाते हुए जीन्स महोदय कहते हैं कि सूर्य का प्रकाश उस लैंप के समान होगा जिसमें ३,२३,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००० मोमबत्ती के प्रकाश के बराबर प्रकाश हो! यदि ६,००,००० चाँद एकत्र हो सकें तब कहीं सूर्य के बराबर प्रकाश हो सकेगा।

९—वर्ण-मण्डल—सूर्य के मध्य भाग अर्थात प्रकाश-मण्डल के ऊपर उसका वर्ण-मण्डल या Chromosphere है।

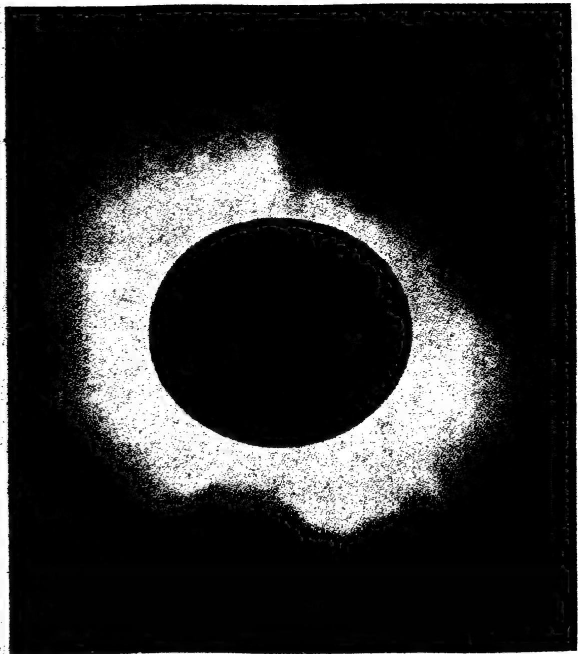
यह करीब १०,००० मील गहरा होगा। इस वर्ण-मण्डल में अत्यंत तप्त गैसों की प्रचण्ड आँधी उठा करती है। उन भयानक लहरों वा अग्नि-ज्वालाओं का ज्योतिषी लोग सर्व-सूर्यग्रहण के अवसर पर दर्शन कर पाते हैं। उस समय इनकी माप भी ली जाती है। इन्हें अंग्रेजी में Prominences या रक्त-ज्वालाएँ कहते हैं। अभी तक परीक्षा करने से पता चला है कि इन अग्नि शिखाओं की ऊँचाई सवा लाख मील, कभी-कभी इससे भी ज्यादा होती है। और यह सूर्य के पिण्ड पर ५,००,००० मील तक उठती देखी गई है। इन ज्वालाओं की तीव्र गति सुनकर आप भौचक्के रह जाँयगे। गणना करने पर पता चला है कि इन शिखाओं की गति प्रति सेकेण्ड ६० हजार मील तक देखी गयी है !

प्रकाश-मण्डल और वर्ण-मण्डल के बीच एक तह और मानी जाती है जिसे सूर्य का पलटाऊ तह कहते हैं। इसे अंग्रेजी में Reversing Layer कहते हैं। उसकी गहराई करीब १,००० मील होती है। यह तह प्रकाश-मण्डल की अपेक्षा कुछ ठंढी मानी गई है।

१०--मुकुट वा कोरोना—सर्व-सूर्य-ग्रहण के अवसर पर सूर्य के चारों ओर एक मुकुट सा दिखाई पड़ता है जिसे हम सूर्य का Corona या मुकुट कहते हैं। सूर्य के Corona का आकार बहुत बड़ा है। यह लाखों मील तक सूर्य को घेरे रहता है। सूर्य के मुकुट में इतना प्रकाश होता है कि सूर्य के समूचे ग्रहण के अवसर पर भी उसके प्रकाश के कारण हमारी धरती काफ़ी



सूर्य की रक्त ज्वालाएँ



कोरोना या मुकुट

प्रकाशमान रहती है। सूर्य-ग्रहण के समय आप इस सूर्य-मुकुट वा Corona का सुन्दर दृश्य देख सकते हैं।

११--सूर्य की आयु—क्या आपने कभी इस पर भी विचार किया है कि इस सूर्य की आयु क्या होगी ? जब से हमारे इतिहास का आरंभ होता है तब से सूर्य इसी भाँति चमकता आ रहा है। इसलिए यह कहना कठिन है कि उसकी युवावस्था की झलक मनुष्य ने देखी होगी। सूर्य की आयु का अनुमान ज्योतिषी लोग किस तरह लगाते हैं। उनका कहना है कि पृथ्वी को उत्पन्न हुए करीब २०,००,००,००,००,००० वर्ष से अधिक हुए होंगे। पर जेम्स जीन्स का कहना है कि जिस समय पृथ्वी की उत्पत्ति हुई उस समय सूर्य ऐसा ही रहा होगा जैसा यह आजकल है। इस हिसाब से सूर्य की प्रायः दीर्घ आयु का अनुमान किया जा सकता है। यह समय इतने वर्षों का होगा कि हमें अंत में यही मानना पड़ेगा कि इस विश्व के लिए हमारे जैसे ३६५ दिनों के वर्ष की माप वैसी ही है जैसे समुद्र को अँजुली से नापना। इसी लिए कहते हैं कि महान् विश्व में समय और दूरी की हद नहीं है।

१२–सूर्य का आकर्षण—आप जानते हैं कि सूर्य का आकर्षण हमारी पृथ्वी से कई गुना अधिक है। इस गुरुत्वाकर्षण की माप लोगों ने की है। गणित से पता चलता है कि पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य का आकर्षण २८ गुना अधिक है। इसका परिमाण

क्या होता है? यदि आप कहीं सूर्य के पृष्ठ पर पहुँच सकें तो आप का वज़न २८ गुना बढ़ जायगा। यहाँ का एक सेर सूर्य पर २८ सेर ठहरेगा! जितनी शक्ति लगाकर आप पृथ्वी पर २८ सेर उठा सकते हैं उतनी ही शक्ति लगाने पर आप सूर्य पर कहीं एक सेर उठा सकेंगे। सूर्य के इस गुरुत्वाकर्षण का परिणाम यह है कि उसके केन्द्र पर प्रति इंच २०,००,००,००,००० मन का दबाव रहता है; वहाँ ताप ४,००,००,००० डिगरी सेंटीग्रेड से अधिक रहता है। इस भयानक ताप के होते हुए भी प्रचण्ड दाब होने के कारण वहाँ की गैस भी पानी की अपेक्षा २८ गुनी भारी होगी और वह हमारी पृथ्वी की ठस-से-ठस धातु से अधिक ठस होगी! हमारी धरती पर सब से अधिक भारी धातु प्लैटिनम है जो पानी से केवल २१ गुना भारी है। इस प्रकार सूर्य का वज़न ज्योतिषी लोग २,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००० टन आँकते हैं और एक टन २७ मन के करीब होता है। आप स्वयं हिसाब लगा लें कि कितने मन होंगे?

१३–**क्या सूर्य घटता है**—सूर्य की आयु का अनुमान लगाते हुए ज्योतिष के पंडित कहते हैं कि सूर्य को उत्पन्न हुए—७५,००,००,००,००,००० वर्ष हुए। इतने दिनों में क्या सूर्य कुछ घटा-बढ़ा नहीं? अवश्य घटा-बढ़ा होगा। आप जानते हैं कि ज्यों-ज्यों ताप निकल रहा है सूर्य कुछ छोटा होता जा रहा है और उसका वज़न भी घट रहा है। हिसाब लगाया गया है

तो पता चला है कि सूर्य प्रति ११ वर्षों में एक मील व्यास में कम हो जाता है ! और सूर्य का वज़न प्रति सेकण्ड ४०,००,००० टन घट रहा है। इस हिसाब से प्रारंभ का सूर्य कितना बड़ा रहा होगा ? उसकी आयु आप को मालूम है, ज़रा गणना करके पता तो लगाइए। आप शायद यह न जानते हों कि सूर्य के इस घटने का परिणाम हमारी पृथ्वी पर क्या पड़ रहा है। यह भी सुन लीजिए। सौर-पिण्ड के सिकुड़ने के साथ-साथ उसके गुरुत्वाकर्षण में परिवर्तन हो रहा है और पृथ्वी के ऊपर सूर्य की ग्रहण-शक्ति कम हो रही है और इसी लिए पृथ्वी प्रति वर्ष सूर्य से ३/४ इंच दूर होती जा रही है। १०,००,००,००,००,००० वर्षों में पृथ्वी सूर्य से ५७,००,००० मील और दूर हो जायगी। उस समय पृथ्वी की गरमी ३० डिगरी (C) होगी। यदि मनुष्य उस पर बचा रहा तो वह हिमयुग का अनुभव करेगा।

१४—सूर्य में गरमी कहाँ से आती है ? सूर्य जो इतने दिनों से हमें प्रकाश और ताप दे रहा है आखिर उसके भण्डार में इतनी गरमी आती कहाँ से है ? क्या वह कभी कम होगी वा नहीं ?—इस प्रकार के प्रश्न उठते हैं। यदि यह मान लें कि सूर्य में ऐसी वस्तुएँ हैं जैसे कोयला आदि जो जल रही हैं तो हमें समझ रखना चाहिए कि सूर्य में प्रति सेकण्ड जलने के लिए कितना कोयला चाहिए ? इस हिसाब से यदि समूचा सूर्य-पिण्ड कोयले का होता तो वह भी केवल २८,०० वर्षों में जलकर समाप्त हो जाता। इसलिए यह मानना व्यर्थ है कि सूर्य की

गरमी किसी वस्तु के जलने के कारण है। कुछ लोगों का अनुमान है कि सूर्य की गरमी का कारण उसका संकुचन या सिकुड़ना है। एक समय था जब सूर्य समस्त सौर मण्डल के बराबर के आकार का था। धीरे-धीरे वह छोटा होता गया। इस प्रकार वह वर्तमान आकार को प्राप्त हुआ। इस संकुचन का फल यह हुआ कि उसका तापमान बढ़ता गया। इस मत का भी लोगों ने विरोध किया है क्योंकि इस तरह सूर्य की आयु केवल ५०,००,००,००० वर्ष ठहरती थी। अनेक प्रमाणों से यह साबित हो चुका है कि सूर्य की आयु इससे बहुत ज़्यादा है। इसलिए सूर्य के अक्षय ताप का कारण कुछ और ही मानना पड़ेगा। कुछ लोगों ने यह प्रमाणित करना चाहा कि सूर्य के भीतर जो उल्काएँ आकर गिरती रहती हैं--अर्थात् आकाश में विचरने वाले मृत पिण्ड जो सूर्य की आकर्षण शक्ति से खिंचकर गिरते हैं, उनके जलने से सूर्य का ताप घटता नहीं। यदि इसे भी मान लें तो फिर उनके गिरने से सूर्य का वज़न बढ़ना चाहिए और फिर अभी तक जितनी उल्काएँ गिरीं होंगी उनसे आज के सूर्य का वज़न पहले का दुगना होना चाहिए। यहाँ तो बात उलटी ही है। सूर्य तो दिनों-दिन हल्का हो रहा है। फिर सूर्य के इस ताप का उद्-गम कहाँ है?

१५--सूर्य के ताप का कारण—सूर्य के ताप का कारण बाद में लोगों ने यह निश्चय किया कि सूर्य के भीतर ऐसे धातु (जैसे रेडियम आदि) हैं जिनके कारण सूर्य की गरमी बराबर

बनी रहती है। इसमें संदेह नहीं सूर्य में बहुत सी धातु हैं। परन्तु इस सिद्धान्त से भी काम चलता नहीं दिखाई पड़ता। आधुनिक विज्ञान का कहना है कि सूर्य न तो जल रहा है, न उसमें कोई चीज़ जल रही है, जिसके कारण गरमी और प्रकाश निकलता है वरन् सूर्य के इस अक्षय ताप का कारण परमाणुओं का आचरण है। कहते हैं कि सूर्य के भीतर के भयानक ताप के कारण धातुओं के परमाणु, अलग-अलग हो गये हैं और वे आपस में मिलते और अलग होते रहते हैं। उनकी इस क्रिया के कारण ताप उत्पन्न होता रहता है।

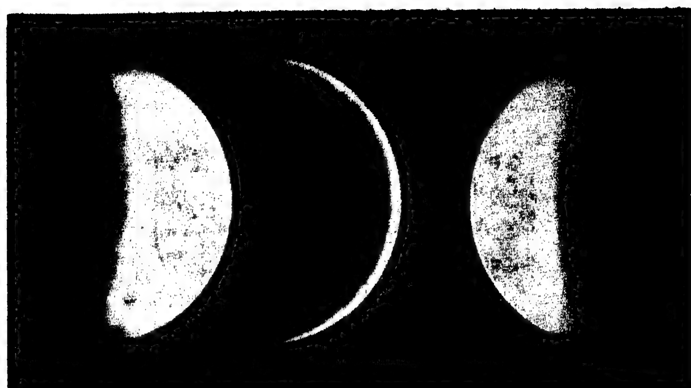
१६--**परमाणु का आचरण**—परमाणु क्या हैं? कैसे वे आचरण करते हैं? इसे भी जान लेना चाहिए। संसार में जितनी वस्तुएँ हैं छोटे-छोटे अणुओं के मिलने के कारण बनी हैं। इन अणुओं में बहुत से परमाणु होते हैं। प्रत्येक परमाणु में धन परमाणु या प्रकरण या Proton और Electron या ऋणाणु होते हैं। धनाणु या प्रकरण (Proton) के चारों ओर ऋणाणु वेग से चक्कर लगाते रहते हैं। इन्हीं परमाणुओं की मात्रा के अनुसार भिन्न-भिन्न पदार्थों के अणु बनते हैं। किसी में १ प्रकरण और एक ऋणाणु रहता है, किसी में दो। इस तरह अभी तक ९२ तक के संयोग से बने पदार्थों का पता लगा है। परीक्षा करके देखा गया है कि ये परमाणु एक दूसरे से जब प्रथक कर दिये जाते हैं तब ये बहुत विचलित हो उठते हैं और पुनः ये मिलने का उद्योग करते हैं। विज्ञान के पंडितों का कहना

है कि सूर्य में उन्हीं परमाणुद्वय का आधिक्य है और सूर्य के भयानक ताप के कारण ये परमाणु विचलित दशा में बड़ी तेजी से भटकते रहते हैं और वे आपस में मिलते और बराबर अलग होते रहते हैं। इनके मिलने और बिछुड़ने की क्रिया प्रति सेकेण्ड लाखों बार होती है जिसके कारण सूर्य में ताप उत्पन्न होता है। इसी मिलन और बिछुड़न का परिणाम यह हो रहा है कि सूर्य निरंतर ताप और प्रकाश देता जा रहा है।

१७--**महान प्रश्न ?**—प्रश्न होता है सूर्य कभी ठंढा भी होगा ? स्मरण रखना चाहिए कि इस विश्व में कोई वस्तु अजर-अमर नहीं है। क्या सूर्य इस सर्वव्यापी नियम का उल्लंघन कर सकता है ? नहीं। एक समय था जब सूर्य (पृथ्वी के जन्म के पूर्व) वर्तमान आकार से सहस्रों गुना बड़ा था। उसका आयतन पहले १०० गुना अधिक था। धीरे-धीरे वह छोटा होता जा रहा है। उसकी शक्ति अवश्य कुछ कम होती जा रही है। आज से करोड़ों अरबों वर्ष बाद हमारा सूर्य बहुत छोटा हो जायगा और उसकी शक्ति क्षीण होती जायगी, जिसका परिणाम यह होगा कि उसके ग्रह, उसके निग्रह से मुक्त होकर अनंत शून्य प्रदेश में भटकने लगेंगे। फिर एक दिन सूर्य का वह समय भी आवेगा जब सूर्य अपना ताप खो बैठेगा। तब वह भी शून्य में भटकने लगेगा ? हम कहाँ होंगे ? हमारी धरती कहाँ होगी ? परन्तु हमें इस परिणाम को सोचकर चिंतित न होना चाहिए—इसे होने में अभी न जाने कितने युग लगेंगे। और हम

न जाने तब किस नई पृथ्वी पर जन्म लें। इस विश्व में क्या सूर्यों की कमी है—या पृथ्वी की। यदि एक सूर्य नष्ट होता है, एक पृथ्वी पर प्रलय होता है तो विश्व के विशाल प्राँगण में सहस्रों लाखों नये सूर्य, बनते हैं, अनेक नई पृथ्वियाँ उत्पन्न होती रहती हैं!





बुध—चन्द्र के समान इस में भी कलाएँ होती हैं।

५—बुध और शुक्र

१—बुध और शुक्र—पाठक गण ! आइए अब हम सौर परिवार के लोगों का परिचय प्राप्त करें। आप जानते हैं कि हमारी पृथ्वी की कक्षा के भीतर ही बुध और शुक्र सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं। अतः अब आप समझ गये होंगे कि बुध और शुक्र हमारी पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य के निकट हैं। इनमें बुध तो बहुत छोटा है। इसका व्यास ३,१०० मील ही है अर्थात् हमारी पृथ्वी के व्यास का आधा और शुक्र का व्यास करीब-करीब हमारी पृथ्वी के व्यास के बराबर ही अर्थात् ७,७०१ मील है। बुध सूर्य के अत्यन्त निकट ३,६०,००,००० मील की दूरी पर रहता है और शुक्र सूर्य से ६,७०,००,००० मील की दूरी पर अपनी कक्षा में भ्रमण करता है।



बुध के पहाड़ों का एक कल्पित चित्र। यहाँ पहाड़ों के चट्टान इतने गर्म होंगें कि उन पर टिन रखते ही पिघल जायगा।

२--बुध-शुक्र की तौल—पहले बुध को लीजिए। हमारी पृथ्वी की तौल यदि आप आधा सेर मान लें तो बुध का वज़न ½ चटाँक से ज़्यादा नहीं ठहरेगा। आप पूछेंगे कि आकाश में रहने वाले इन पिण्डों की किसी ने नाप-तौल तो की नहीं, इसका पता कैसे चलता है? बात यह है कि ज्योतिषी इन ग्रहों के परस्पर आकर्षण शक्ति के अनुसार उनकी नाप और तौल का हिसाब लगाता है। शुक्र और बुध पृथ्वी को कितना आकृष्ट करते हैं इसका पता हम लगा लेते हैं। इसी के आधार पर हम बुध और अनुपात में शुक्र की तौल का पता लगाते हैं। बुध का आकार जितना है उसके अनुसार वह हमारी पृथ्वी से कुछ हलका ही है। कहते हैं कि हमारी पृथ्वी पानी से ५.५३ (करीब ५½) गुना भारी है। इस दृष्टि से बुध पानी से केवल ४.५ गुना भारी है और शुक्र केवल ४.९ गुना। स्मरण रखें कि कुछ ग्रह पानी से भी हलके हैं जैसे शनि। इसका वज़न उसके आकार के अनुपात में पानी से हलका है। यदि आप शनि को समुद्र में डाल सकें तो वह उतराने लगेगा।

३--बुध पर ताप—ज्योतिषी लोगों का कहना है कि बुध सूर्य के अत्यन्त निकट होने के कारण अत्यंत तप्त रहता है। उसकी कक्षा छोटी है, और उस पर का वर्ष केवल ८८ दिनों का होता है (हमारे दिनों के नाप के अनुसार)। एक बड़े आश्चर्य्य की बात यह है कि बुध का दिन भी पूरे साल भर का होता है अर्थात् हमारे ८८ दिनों के बराबर! इस का कारण क्या है? कहते हैं कि बुध का 'हमारे चन्द्रमा की भांति' केवल एक ही



बुध की कलाएँ

[सौर-परिवार

भाग सदा सूर्य की ओर रहता है। इस कारण उसके पिण्ड का यह भाग सदा सूर्य के भीषण ताप और प्रकाश का भागी भी रहता है। इसका परिणाम क्या होगा? आप सोच सकते हैं। उसके दूसरे आधे भाग में सदा अँधकारमय रात्रि रहती होगी और इस लिए वहाँ भीषण शीत होगा। कहते हैं कि बुध के उस भाग में जो सूर्य के सम्मुख रहता है ६६० डिगरी (फ़) की गरमी होगी। इस भयानक ताप में पानी तो ठहर ही नहीं सकता। शायद बुध के इस भाग में समुद्र तरल सीसे, गंधक आदि पदार्थों से भरे होंगे! और दूसरे अँधेरे भाग की क्या दशा होगी? वहाँ तो शायद बरफ सदा अचल रहती होगी! क्या आप ऐसे विचित्र देश में वनस्पति या प्राणियों का होना संभव समझते हैं? नहीं! इसी कारण लोगों का विश्वास है कि बुध बिल्कुल उजाड़ होगा। वहाँ पेड़-पौधे, जीव-जन्तु आदि कुछ नहीं हो सकते।

४--**कलामय-बुध का दर्शन**—आप जानते हैं कि बुध सूर्य के अधिक समीप ही है इसी कारण वह हमें खास खास समय दिखाई पड़ता है। बुध को हम संध्या के बाद वा सूर्योदय के कुछ पूर्व देख सकते हैं। परन्तु इसे कठिनता से आप आँखों से देख सकेंगे। एक विचित्र बात बुध के विषय में यह है कि यदि आप दूरबीन से इसे देखें तो आपकोइस में चन्द्रमा की तरह कलाएँ दिखाई पड़ेंगी अर्थात् वह घटता-बढ़ता रहता है। इस का कारण यही है कि हमारी पृथ्वी की कक्षा में होने के कारण हमें वह सदा एक सा नहीं दिखाई पड़ता। जब बुध सूर्य के उस पार—हमारी पृथ्वी

और सूर्य के सोध में रहता है तो हमें उसका पूर्ण प्रकाशित पिण्ड पूर्णिमा के चन्द्र की तरह दिखाई पड़ता है। जब वह सूर्य के इस पार—हमारी पृथ्वी और सूर्य के बीच आ जाता है तो हमें वह नहीं दिखाई पड़ता। पृष्ठ ६४ पर के चित्र से आप बुध की कलाओं का कारण समझ सकते हैं।

५—बुध की दशा—बुध के विषय में दो एक आवश्यक बातें और जानने योग्य हैं। बुध सूर्य के चारों तरफ घूमता है यह आप जानते हैं, पर इसकी कक्षा सूर्य को केन्द्र मान कर वृत्त नहीं बनाती वरन् बुध कभी सूर्य के निकट कभी सूर्य से दूर रहता है। बुध की कक्षा (Orbit) अधिक दीर्घवृत्ताकार है। दूरदर्शक यंत्र से देखने पर पता लगता है कि उस पर हमारी धरती के समान 'वायु-मण्डल' की कमी होगी। बुध की आकर्षण-शक्ति कम है ही इसलिए वहाँ का वायु-मण्डल तो दूसरे ग्रहों ने खींच लिया होगा। जहाँ कहीं वायु-मण्डल रहता है, वहाँ प्रकाश का ज्यादा अंश लौट आता है, जैसे बादलों पर सूर्य की किरणें जब पड़ती हैं तो उनका अधिक अंश वहाँ से उलट कर बिखर जाता है। इस प्रकार परीक्षा करने पर बुध, प्रकाश का बहुत कम भाग (सौ में केवल ७) परिक्षेपण करता है जिससे विश्वास होता है कि वहाँ वायु-मण्डल नहीं है। ऐसी दशा में वहाँ पानी तो हो ही नहीं सकता। यदि आप बुध को देखना चाहे तो संध्या के कुछ ही पहले वा प्रातःकाल के कुछ ही पहले उसे सूर्य के समीप ढूँढें, क्योंकि बुध सूर्य के समीप ही रहता है।

६–शुक्र—अब थोड़ा शुक्र का हाल सुनिये। आपने अनुमान से जान लिया होगा कि शुक्र और बुध में बहुत कुछ समानता है। दोनों ही पृथ्वी की कक्षा के भीतर है, अतः बुध की तरह शुक्र में भी कलाएँ दिखाई पड़ेंगी और शुक्र भी बुध की तरह प्रातः-काल और संध्या समय ही दिखाई पड़ेगा। यदि आप शुक्र को देखना चाहें तो इसी समय पूर्व और पश्चिम दिशा में उसकी खोज करें। शुक्र बुध की अपेक्षा अधिक चमकीला और सुन्दर है इसलिए आप को उसे ढूंढ़ निकालते देर न लगेगी।

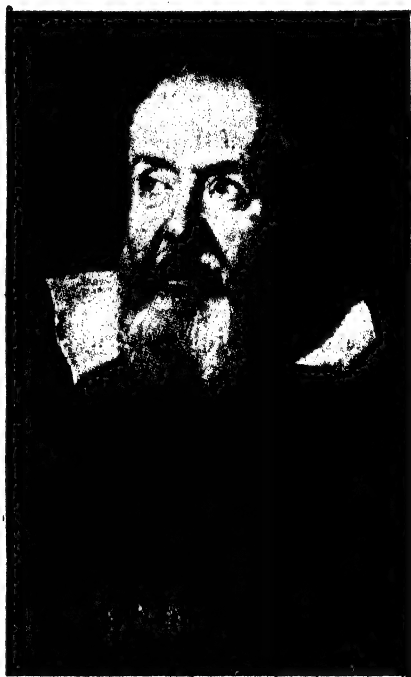
७–शुक्र का व्यास—शुक्र, आप जानते हैं हमारी पृथ्वी के बराबर ही सा है। इसका व्यास ७,७०१ मील है और यह सूर्य से ६,७०,००,००० मील की दूरी पर रहता है। पृथ्वी के बरा-बर और उसके समीप होने के कारण ज्योतिषी लोग इन दोनों ग्रहों (पृथ्वी और शुक्र) को "जोड़वाँ" कहते हैं। शुक्र की कक्षा हमारी पृथ्वी से छोटी है। इसका एक वर्ष हमारे २२५ दिन के बराबर होता है। शुक्र का दिन प्रायः हमारे ही दिन के बराबर [२३ घंटे २१ मिनट] है। परन्तु उसके दिन-मान के विषय में अभी ज्योतिषी लोग निश्चित मत पर नहीं पहुँच सके। कुछ लोगों का कहना है कि बुध की भाँति शुक्र का दिन भी पूरे साल भर का होगा।

८–शुक्र का वायु-मण्डल—दूरदर्शक यंत्रों से परीक्षा करने पर पता चलता है कि शुक्र पर वायु-मण्डल का होना संभव

है। अधिक संभव है हमारी धरती के ही समान वहाँ वायु-मण्डल हो। दूरबीन से देखा गया तो शुक्र का धरातल नहीं दिखाई पड़ा। इससे लोगों का विश्वास है कि शुक्र पर बादल रहते हैं और वे खूब छाये हुए रहते हैं। कभी-कभी इन बादलों के हट जाने पर शुक्र का कुछ भाग दिखाई पड़ा परन्तु उससे अभी यह नहीं निश्चय हो सका कि इसका पिण्ड घूमता है या नहीं। इसी से लोगों का ख्याल है कि शुक्र का भी, बुध की तरह एक ही भाग सदा सूर्य की ओर रहता है। ऐसी दशा में शुक्र पर भी आधे भाग में अत्यन्त ताप और आधे में अत्यन्त शीत होगा।

९-क्या शुक्र में प्राणी हैं ?—आप जानते हैं कि रश्मि-विश्लेषण यंत्र (Spectroscope) की सहायता से हम प्रकाश-रश्मि की परीक्षा कर के यह जान लेते हैं कि यह प्रकाश किस पदार्थ का है। इस प्रकार की परीक्षा से हमें यह पता चलता है कि शुक्र पर ओषजन गैस (Oxygen) वर्तमान है। परन्तु यह ओषजन गैस अभी बहुत कम मात्रा में है। इससे आप शुक्र के के विषय में क्या समझ सकते हैं ? इससे यह पता चल सकता है कि शुक्र पर पड़े-पौदे हैं या नहीं। यह कैसे ? इसे समझ लीजिए। पेड़ पौदों के ही कारण Oxygen की उत्पत्ति हुई है। यदि पृथ्वी पर समस्त वनस्पति नष्ट हो जायँ तो आप विश्वास रखें कि ओषजन गैस वायु से बिलकुल गायब हो जाय। फिर तो हमारा जीना कठिन होगा। इसी लिए विज्ञान-विशारदों का कहना है कि हमारी पृथ्वी पर जीव उत्पन्न होने के लिए पहले पेड़ पौधों की

उत्पत्ति हुई और उन्हीं ने हमारे जीवन के लिए अनिवार्य पदार्थ, ओषजन गैस वायु-मण्डल में तैयार किया। रसायनिक क्रिया के विषय में अधिक तो नहीं पर इतना आप समझ लें कि पेड़-पौधे जो गैस छोड़ते हैं वह हमारे लिए आवश्यक है और हमारे फेफड़े से जो ख़राब हवा बाहर जाती है वह उनके लिए उपयोगी है। इस प्रकार वनस्पति हमारे लिए गैस तैयार करते हैं। शुक्र पर वायु-मण्डल तो है पर उसमें हमारी धरती की भाँति हवा नहीं होगी। उसमें ओषजन गैस, कार्बन गैस से मिला हुआ होगा। यदि वनस्पति शुक्र पर होते तो ऐसा न होता। अब आप स्वयं सोच सकते हैं कि जहाँ वनस्पति नहीं हैं। वहाँ जीवों का होना तो निश्चय असंभव है इसलिए शुक्र की भी दशा बुध की सी होगी। शुक्र सहारा मरु प्रदेश से भी अधिक निर्जन और उजाड़



गैलीलियो

[सौरपरिवार

होगा। परन्तु वहाँ कुछ नमी होगी—कुछ पानी भी होगा।

१०—**शुक्र की कलाएँ**—आपने यह पहले ही समझ लिया होगा कि शुक्र में भी चन्द्रमा की तरह, उसी कारण कलाएँ दिखाई पड़ेंगी जैसे बुध में। परन्तु क्या आप जानते हैं कि पहले-पहल इसका पता इटाली निवासी गैलीलियो ने लगाया था। आप यह स्मरण रखें कि पृथ्वी की कक्षा के भीतर पड़ने वाले ग्रहों के अतिरिक्त हमें अन्य किसी ग्रह की वैसी कलाएँ नहीं देखने को मिलेंगी। शुक्र के धरातल के विषय में अभी हमारी जानकारी थोड़ी है। परन्तु कहते हैं कि शुक्र पर हमारी पृथ्वी की अपेक्षा दूनी गरमी होगी। नापने से पता चला है कि शुक्र के वायु-मण्डल की गहराई ७० मील के करीब होगी। आप ने समझ लिया कि बुध की अपेक्षा पृथ्वी भारी है। इसी तरह शुक्र की अपेक्षा भी पृथ्वी कुछ भारी ही है। यदि पृथ्वी आधा सेर मानी जाय तो शुक्र ६$\frac{१}{२}$ छटाँक ही ठहरेगा। पानी की अपेक्षा शुक्र ४$\frac{२}{३}$ गुना (करीब ५) से कुछ ऊपर भारी निकलेगा।

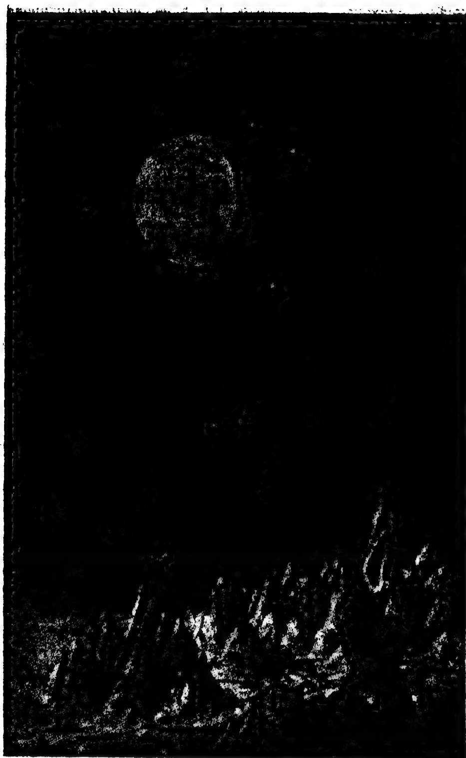
११—**शुक्र का वृत्त**—बुध की तरह शुक्र भी वृत्त में सूर्य को केन्द्रमान कर नहीं चलता। प्रायः सभी ग्रहों की कक्षा वृत्ताकार न होकर दीर्घ-वृत्ताकार होती है। किसी का कुछ कम किसी का कुछ अधिक। शुक्र भी इसी कारण कभी सूर्य के निकट रहता है कभी उससे दूर। शुक्र भ्रमण करते-करते हमारी धरती से बहुत निकट दूरी पर पहुँच जाता है, परन्तु हम उस समय उसे

पूरी तरह नहीं देख सकते। उसका आकार चन्द्र की कला की तरह रहता है। अत्यन्त चमकीले होने के कारण ज्योतिषी लोग उसकी परीक्षा अभी पूरी तरह नहीं कर सके। आँखों से देखने में यह बहुत सुन्दर लगता है। आप कभी स्वयं शुक्र को देखने का आनन्द उठावें।





पृथ्वी का जन्म इसी प्रकार हुआ होगा



चन्द्रमा पर से देखने पर पृथ्वी इसी प्रकार दिखाई पड़ती होगी

[सौरपरिवार

६—पृथ्वी और चन्द्र

१—हमारी पृथ्वी—सौरपरिवार में हमारी पृथ्वी का नम्बर तीसरा है। बुध और शुक्र के बाद हमारी पृथ्वी सूर्य से ९,३०,००,००० मील की औसत दूरी पर रह कर अपनी कक्षा में भ्रमण करती है। इस कक्षा की लम्बाई ५८,००,००,००० मील है। इस दूरी को हमारी धरती ३६५$\frac{1}{4}$ दिनों में तै करती है। इस

प्रकार १००० मील प्रति मिनट के हिसाब से पृथ्वी अपनी कक्षा पर यात्रा करती है। पृथ्वी की इस यात्रा का परिणाम ही हमारा वर्ष होता है। पृथ्वी इस प्रदक्षिणा के अतिरिक्त अपनी धुरी पर भी घूमती रहती है जिसके कारण हमारे यहाँ रात-दिन होता है। पृथ्वी की पहली गति को Revolution कहते हैं और दूसरे को Rotation. अपनी धुरी पर घूमती हुई पृथ्वी अपनी कक्षा पर कुछ झुकी रहती है जिसके कारण उसके ध्रुव प्रदेश कभी सूर्य के सम्मुख कभी विमुख रहा करते हैं। उसका परिणाम यह होता है कि कभी पृथ्वी का उत्तरार्ध भाग सूर्य के प्रकाश और ताप का भागी होता है कभी दक्षिणार्ध भाग। इसीलिए कभी आधे वर्ष तक उत्तरी ध्रुव प्रदेश में रात, कभी दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में दिन रहता है। पृथ्वी की सतह पर ऋतुओं के परिवर्तन का भी यही कारण है कि पृथ्वी का अक्ष या Axis उसकी कक्षा पर ठीक समकोण बनाता हुआ नहीं रहता। पृथ्वी का अक्ष उसकी कक्षा पर २३½ डिगरी झुका है।

२--**पृथ्वी का पिण्ड**—अच्छा हमारी धरती की नाप सुनिये, इसका व्यास मध्यभाग में ७,९२७ मील है, परन्तु ध्रुव प्रदेशों की ओर का व्यास केवल ७,९०० मील है। इससे स्पष्ट है कि दोनों उत्तरीय और दक्षिणी ध्रुव-प्रदेश कुछ दबे हुए हैं अर्थात् पृथ्वी का पिण्ड ठीक गोल न होकर नारंगी की तरह दोनों सिरों पर २७ मील के क़रीब दबा हुआ है। यदि आप पृथ्वी के कटिभाग को नापना चाहें तो समझ लीजिये कि २५,०००

मील का फीता लगेगा। इस तरह २५,००० मील का चक्कर पृथ्वी २४ घन्टों में करती है जिससे पता चलता है कि पृथ्वी की अपनी धुरी पर भ्रमण-गति प्रति मिनट १८ मील है। परन्तु अपनी कक्षा पर वह एक सेकंड में १८ मील की गति से सूर्य के चारों ओर घूमती रहती है। यह गति बन्दूक की गोली से ५० गुनी अधिक है और तेज़ से तेज़ डाकगाड़ी से १,००० गुना अधिक। पृथ्वी की इस तेज़ी से आप घबड़ा न उठें। इससे भी तेज़ अन्य ग्रह हैं। बुध और शुक्र पृथ्वी से तेज़ चलते हैं। स्वाती नामक नक्षत्र प्रति सेकंड २०० मील की गति से चलता है। एक समय था जब पृथ्वी युवा थी; उस समय उसकी गति बड़ी तीव्र थी। कहते हैं कि जन्म के पश्चात् १५,००० वर्षों तक, पृथ्वी केवल ४ घंटों में अपनी धुरी पर घूम जाती थी। उस समय दिन-रात का परिणाम केवल ४ घंटे का होता था। कहते हैं कि प्रारंभिक पृथ्वी का तापमान आज से अधिक था। परन्तु इसे हुए करीब २,००,००,००,००० वर्ष हुए होंगे।

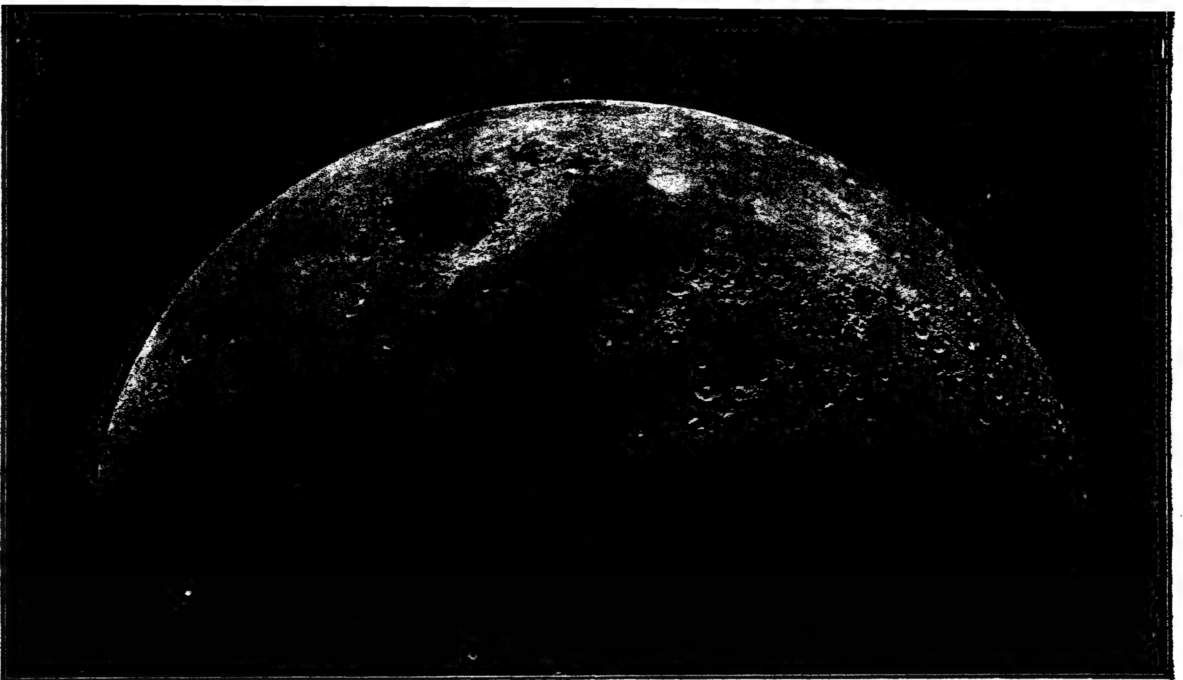
३–रात-दिन, मौसिम—पृथ्वी का सम्बन्ध सूर्य से ही है और हमारी पृथ्वी पर जो कुछ होता है उसका कारण सूर्य ही है। रात-दिन सूर्य के कारण होते हैं। हमारी धरती का जो भाग सूर्य के सामने रहता है वहाँ अवश्य दिन होता है। जो उसके सामने नहीं रहता वहाँ रात रहती है। इस तरह पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती हुई अपनी कक्षा पर चलती रहती है। पृथ्वी की कक्षा बिलकुल गोल नहीं है वरन

उसका आकार दीर्घवृत्त है। अब आप समझ लें कि इस प्रकार दीर्घवृत्त वाली कक्षा में घूमती हुई पृथ्वी कभी सूर्य के निकट पहुँचती है कभी उस से दूर। ऐसा साल में दो बार होता है। आप जानते हैं कि पृथ्वी की धुरी उसकी कक्षा पर सीधी नहीं खड़ी है, इसलिए जब पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है तो साल के छः महीनों में उसका उत्तरीय ध्रुव सूर्य के सामने रहता है और छः महीने दक्षिणीय ध्रुव प्रदेश। परिणाम यह होता है कि एक में जब छः महीने का दिन रहता है तब दूसरे में छः महीने की रात!

४—मौसिम का कारण—आप सोचते होंगे कि सूर्य से दूर होने अथवा निकट होने के ही कारण पृथ्वी पर गरमी-सरदी पड़ती है। ऐसी बात नहीं है। बात यह है कि धुरी के तिरछे होने के कारण जब जहाँ जैसी सूर्य की किरणें पड़ती हैं वैसा मौसिम होता है। पृथ्वी का मध्य भाग सदा सूर्य के सामने रहता है, वहाँ किरणें सीधी पड़ती हैं इसलिए वहाँ बहुत गरमी रहती है। उत्तरार्ध तथा दक्षिणार्ध भाग में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं, इसलिए ज्यों-ज्यों आप ध्रुव-प्रदेशों की ओर बढ़ेंगे (चाहे उत्तर वा दक्षिण) आप को सरदी बढ़ती हुई मिलेगी। पृथ्वी के अक्ष के तिरछे होने का परिणाम यह भी होता है कि रात दिन घटते-बढ़ते रहते हैं। साल में दो बार (सितम्बर २३, और मार्च २१) को पृथ्वी का अक्ष ऐसी अवस्था में रहता है कि पृथ्वी का बराबर भाग सूर्य के सामने आता है, तब दिन-

रात बराबर होते हैं। फिर वे धीरे-धीरे घटने-बढ़ने लगते हैं। अच्छा यह समझ लें कि २१ मार्च को दिन-रात बराबर रहे। अब पृथ्वी का उत्तरार्ध भाग सूर्य की ओर झुकना आरम्भ करता है इसीलिये धीरे-धीरे वहाँ दिन मान बढ़ता जाता है। इस प्रकार २१ जून तक उत्तरी भाग में दिन का मान बढ़ता जायगा और उस दिन सब से बड़ा दिन और सब से छोटी रात होगी। फिर धीरे-धीरे पृथ्वी घूमती हुई सूर्य के निकट पहुँचेगी और २३ सितम्बर को उसके अक्ष का झुकाव ऐसा हो जायगा कि रात-दिन दोनों बराबर रहेंगे। अब फिर वह आगे बढ़ती जायगी और उसका दक्षिणीय अर्ध भाग सूर्य के सामने आता जायगा। उत्तरार्ध भाग में रात बढ़ती जायगी और २२ सितम्बर को सबसे बड़ी रात हमारे यहाँ होगी—दक्षिणी भाग में सब से बड़ा दिन होगा। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में तो ६ मास का दिन रहेगा। फिर पृथ्वी आगे बढ़ती जायगी और दक्षिणी गोलार्ध में दिन छोटा होने लगेगा और हमारे उत्तरीय गोलार्ध में रात छोटी होने लगेगी और अंत में २१ मार्च के दिन, रात-दिन दोनों फिर बराबर होंगे। इस प्रकार प्रतिवर्ष परिवर्तन होता रहता है। पृष्ठ ३ पर दिये चित्र में आप इसे अच्छी तरह समझ सकते हैं।

५—चाँद से पृथ्वी कैसी लगती है—पृथ्वी पर रह कर हम दूसरे ग्रहों को देखते हैं। वे हमें चमकते हुए दिखाई पड़ते हैं। परन्तु क्या आप जानते हैं हमारी पृथ्वी उन ग्रहों पर से देखने पर कैसी लगती होगी। ज्योतिषी लोगों ने इसका



चाँद का एक फोटो [सौरपरिवार

हिसाब लगाया है। उनका कहना है कि सूर्य से जो प्रकाश पृथ्वी को मिलता है उसका $\frac{४५}{१००}$ अंश पृथ्वी फेंकती है। इसकी परीक्षा इस प्रकार होती है। द्वितीया और तृतीया का चन्द्र आप देखें तो उसका कुछ भाग तो चमकता रहता है, कुछ भाग अप्रका-



चन्द्रमा का एक चित्र

[सौरपरिवार

चन्द्रमा का कुछ भाग सूर्य के कारण प्रकाशित है और शेष पृथ्वी की चमक के कारण प्रकाशित है।

शित होते हुए भी कुछ-कुछ दिखाई पड़ता है। इसका कारण यही है कि पृथ्वी की चमक उस भाग पर पड़ती है। यदि चन्द्रमा पर कोई पहुँचे तो उसे हमारी पृथ्वी भी चमकता हुई

दिखाई पड़ेगी। चन्द्रमा पर पृथ्वी का प्रकाश उससे ४० गुना बढ़कर दिखाई पड़ेगा। इस प्रकार यह समझ लेना चाहिए कि हमारी पृथ्वी भी अन्य ग्रहों से चमकती हुई दिखाई पड़ती होगी।

६—चाँद—आप जानते हैं कि चाँद हमारी पृथ्वी का उपग्रह है। यह चाँद हमारी पृथ्वी से छोटा है। इसका व्यास २,१६३ मील ही है। यह हमारी पृथ्वी से औसत २,४०,००० मील दूरी पर रहता है। यदि आप तीन सौ मील की गतिवाले वायुयान से चन्द्रलोक की यात्रा करें तो शायद एक महीने में आप वहाँ पहुँच जायँ। चन्द्रमा का पिण्ड हमारी पृथ्वी का केवल $\frac{1}{49}$ होगा। अर्थात् यदि ४९ चाँद हों तो हमारी पृथ्वी के बराबर गोला वन सके। परन्तु वह गोला पृथ्वी से हलका ही होगा। पृथ्वी पानी के अपेक्षा ५·५३ गुना भारी है। पृथ्वी की अपेक्षा चाँद $\frac{3}{5}$ गुना भारी है। इसलिये उसका तौल ८१ चाँद के बराबर ठहरेगा। इसका फल यह होगा कि चाँद की आकर्षणशक्ति भी उसी मात्रा में कम होगी। पृथ्वी पर का एक मन चाँद पर सात सेर के बराबर ही ठहरेगा! चाँद की कक्षा पृथ्वी को घेरती हुई है परन्तु वह बिलकुल गोल वृत्त नहीं है। इसका आकार दीर्घ-वृत्त है। इसके कारण चन्द्रमा कभी पृथ्वी से निकट, कभी उससे दूर रहता है। इसलिए कभी उसका गोला हमें बड़ा, कभी छोटा दिखाई देता है। इसकी औसत दूरी हमारी पृथ्वी से २,३९,००० मील है।

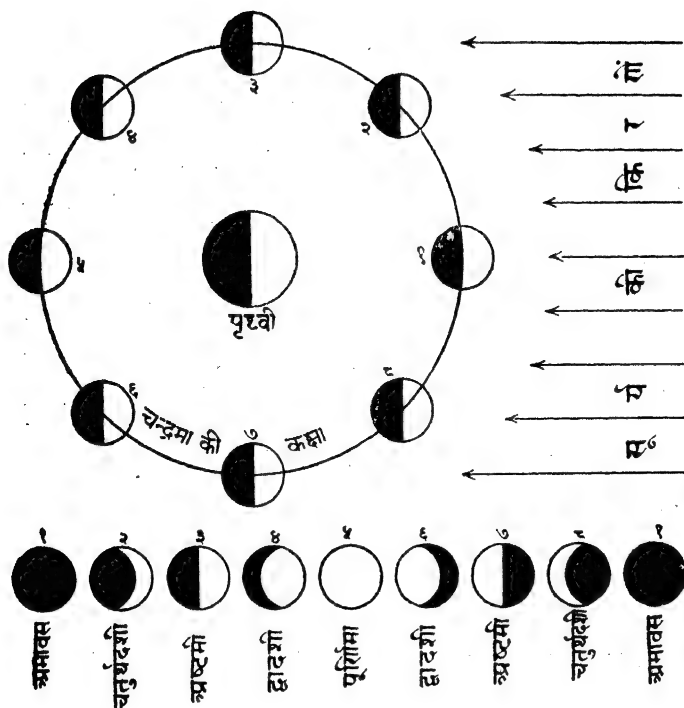
७—चाँद की कलाएँ—पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा घूमता है और इसकी परिक्रमा २९$\frac{1}{2}$ दिनों की होती है। इसी

को हमारे यहाँ चन्द्र-मास कहते हैं। परन्तु पृथ्वी की तरह चन्द्रमा अपनी धुरी पर उतना शीघ्र नहीं घूमता। यदि ऐसा होता हो हमें सदा उसका एक ही भाग न दिखाई पड़ता। चन्द्रमा अपनी धुरी पर २९½ दिनों में घूमता है इसी से चन्द्रमा का एक ही हिस्सा सदा पृथ्वी की तरफ़ रहता है। आप जानते हैं कि एक मास में दो पक्ष या पखवारे होते हैं। इसका अर्थ यही है कि चाँद को अमावस्या से पूर्णिमा और पूर्णिमा से अमावस्या तक कलाएँ बदलने में २९½ दिन लगते हैं। इस तरह चाँद को पृथ्वी की परिक्रमा करने में २९½ दिन लगते हैं। आप पूछेंगे, चाँद घटता-बढ़ता क्यों है ? बात यह है कि पृथ्वी को केन्द्र मानकर चाँद चारों ओर चक्कर लगाता है। चाँद का जितना भाग हमें दिखाई पड़ता है वह चाँद की अपनी चमक के कारण नहीं है वरन् सूर्य की रोशनी के पड़ने की वजह से है। यदि आप पृष्ठ ८२ पर के चित्र में देखें तो आप समझ जायँगे कि पृथ्वी पर से चाँद का कब और कितना भाग हमें दिखाई पड़ सकता है। इन्हें चाँद की कलाएँ कहते हैं।

जिस समय चाँद सूर्य और पृथ्वी के बीच रहता है उस समय उसका प्रकाशित भाग हमसे विपरीत दिशा में रहने के कारण नहीं दिखाई पड़ता। इसी को हम अमावस्या कहते हैं। धीरे-धीरे चाँद अपनी कक्षा पर घूमता जाता है और हमें द्वितीया का चाँद दिखाई पड़ता है। इस तरह घूमता हुआ जब

चाँद सूर्य और पृथ्वी की सीधी रेखा में आ जाता है तो वह हमें पूरा दिखलाई पड़ता है। इसे पूर्णिमा का चाँद कहते हैं। फिर चाँद आगे बढ़ता जाता है और उसका घटना आरंभ हो जाता

चाँद की कलाएँ



है और वह फिर चलते-चलते सूर्य और पृथ्वी के बीच आ जाता है तब वह फिर हमें नहीं दिखलाई पड़ता। इसे अमावस्या कहते हैं।

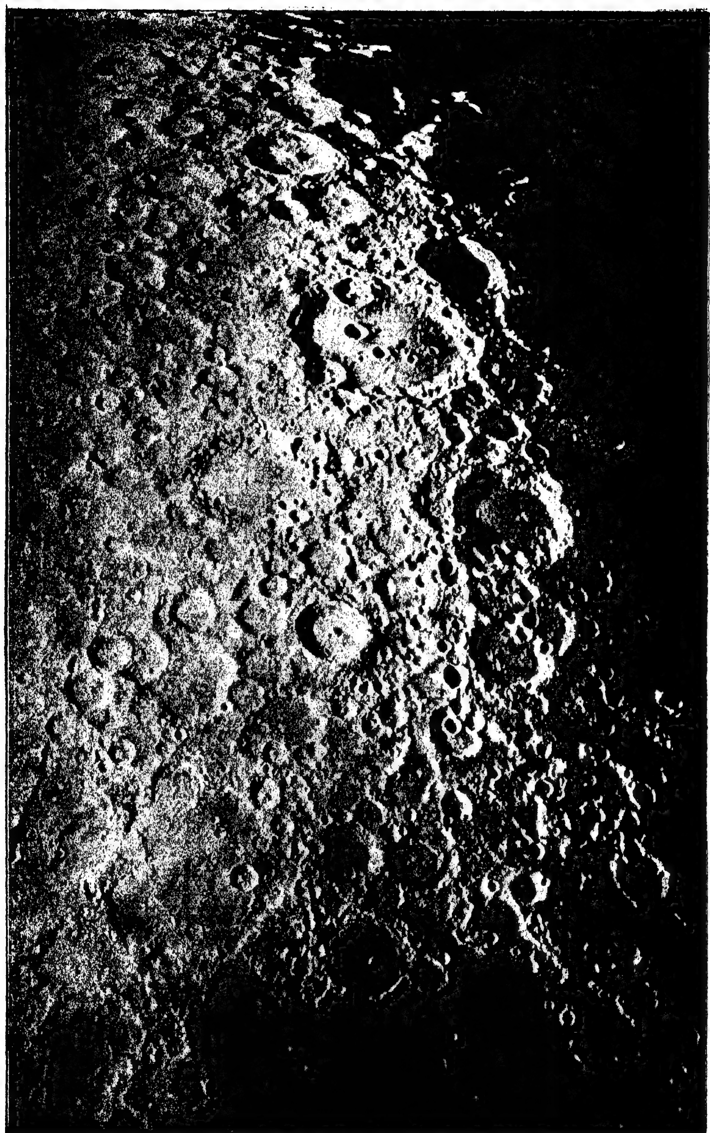
८—**चाँद के कलंक**—चाँद के कलंक की बात तो जगत् प्रसिद्ध है। कवि लोगों ने तो इसे अच्छी प्रसिद्ध दी है। अनपढ़ आदमी भी अपनी-अपनी कल्पना के अनुसार उसका समाधान करता है। कोई इस कलंक को 'शशक' कहता है—इसी से चन्द्रमा का नाम शशाँक भी पड़ा, कोई इसे मृग मानकर उसे



[सौरपरिवार

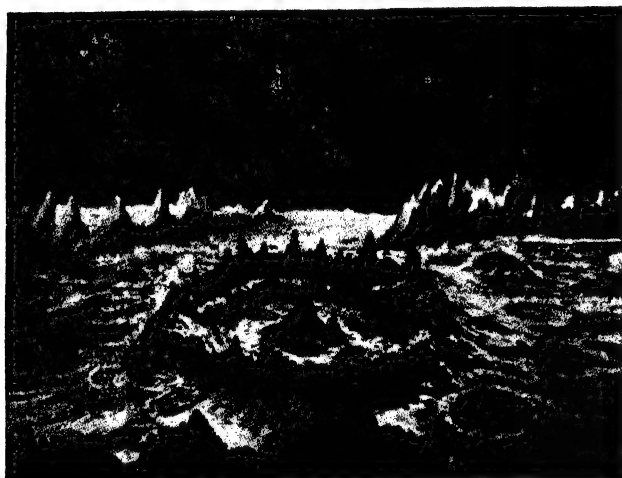
चन्द्रमा के कुछ दरारों का कल्पित चित्र।

'मृगाँग' कहता है। इस प्रकार बहुत प्राचीन काल से मनुष्य चन्द्र पर काले-काले धब्बे देखता आया है और उसके विषय में कल्पना करता आया है। परन्तु इधर दूरबीनों की सहायता से चन्द्रमा के फोटो लिए गये तो उसकी सतह का अच्छा स्पष्ट चित्र हमें देखने को मिलता है। यदि आप चन्द्रमा के इस प्रकार



चन्द्रमा की सतह का फोटो [सौरपरिवार

के फोटो को देखें तो आपको उसकी सतह पर बहुत से चेचक से दाग़ दिखाई पड़ेंगे। पहले-पहल जब गैलीलियो ने चन्द्रमा को अपनी दूरबीन से देखा तो उसने कहा कि चन्द्रमा पर पहाड़ आदि वर्तमान हैं। यदि आप दूरबीन से चन्द्रमा को देखें तो आपको चन्द्रमा पर ज्वालामुखी पर्वतों के बुझे हुए मुख वा



[सौरपरिवार

चाँद के ज्वालामुखी पर्वतों का एक कल्पित चित्र

गड्ढे दिखाई पड़ेंगे जो हमें चेचक के दाग़ की तरह लगेंगे। बीच-बीच में दूर तक फैला हुआ काला प्रदेश दिखाई पड़ेगा जिसे लोग चन्द्रमा पर के समुद्र कहते हैं। परन्तु परीक्षा करने पर पता चला है कि ये समुद्र नहीं वरन घाटियाँ, उपत्यकाएँ हैं



चन्द्रमा का एक कल्पित चित्र

चन्द्रमा पर पहाड़ काफ़ी ऊँचे हैं। उनकी चोटियां २८,००० फुट तक ऊँची हैं जो हमारे यहाँ के पहाड़ों से कम से कम नहीं हैं।

जिनपर पहाड़ों की छाया पड़ती है और वे इसीलिए हमें काली दिखाई पड़ती हैं।

९—चन्द्रतल की जाँच—चन्द्रमा की अब भली-भाँति परीक्षा हो चुकी है। आजकल का ज्योतिषी चन्द्रमा के विषय में खूब परिचित है। उसने चन्द्रमंडल का नक़शा तक बना डाला, उसके पहाड़, मैदान, आदि के नामकरण तक कर डाले हैं। उसका कहना है कि चन्द्रमा पर पहाड़ काफ़ी ऊँचे हैं। उनकी चोटियाँ २७,००० फुट तक ऊँची हैं जो हमारे यहाँ के पहाड़ों से कम नहीं हैं। चन्द्रमा के ज्वालामुखी पर्वत अब ठंडे हो गये हैं उनमें आग नहीं निकलती। उनमें कुछ के मुख का व्यास १०० मील तक है। उनकी संख्या कम-से-कम ३०,००० होगी। चन्द्रमा के मण्डल पर साधारण पहाड़ वैसे-ही हैं जैसे हमारे यहाँ। कहीं-कहीं चन्द्रमा पर आपको दरारें मिलेंगी जो बहुत लम्बी होगीं। चन्द्रमा पर आपको कहीं भी हरियाली नहीं दिखाई पड़ेगी। इसका कारण यही है कि चन्द्रमा पर वायु-मण्डल है ही नहीं। वहाँ ताप इसी कारण ठहर ही नहीं सकता। सूर्य की किरणों के पड़ते ही वहाँ अत्यंत भीषण गरमी हो उठती होगी और उसके हटते ही भीषण सर्दी हो जाती होगी। उसी लिए चन्द्र-लोक पर जीव वा बनस्पति का रहना असंभव है। चन्द्रमा उजाड़, उभड़खाभड़ प्रदेश है जहाँ अत्यन्त ताप और शीत रहता है। न तो वहाँ पानी है न हवा! दिन में चन्द्रमा के पहाड़ ख़ौलते पानी से भी अधिक तप्त हो जाते हैं और रात में तो

वहाँ की हवा भी जमाकर पानी की तरह हो सकती है। इससे आप यह न समझ बैठें कि आरंभ में चन्द्र पर-वायुमण्डल था ही नहीं। रहा तो अवश्य होगा, परन्तु उसके कण सब चन्द्रमा को छोड़कर शून्य में लुप्त हो गये। आप जानते हैं वायु भी-छोटे-छोटे कणों (Molcules) से बनी होती है। ये कण प्रति

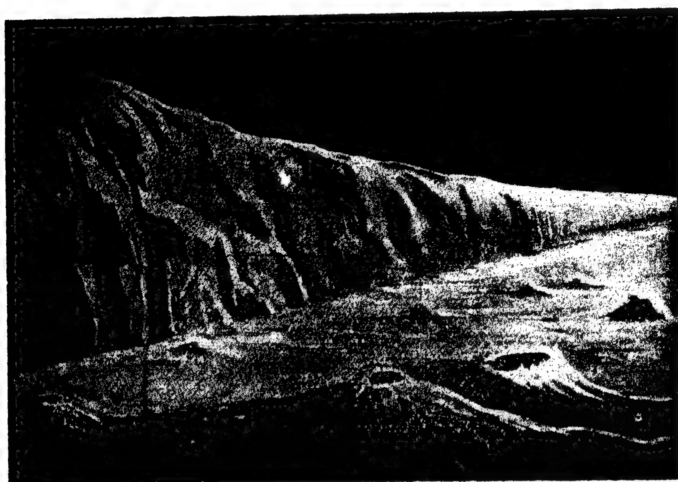


[सौरपरिवार

चन्द्रमा के दरार का एक कल्पित चित्र

सेकेण्ड १,६०० फुट की गति से चलते रहते हैं। यदि कणों की गति इससे तीस गुना बढ़ जाय (अथात् ७ मील प्रति सेकेण्ड हो जाय) तो वे हमारी पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के बाहर हो जायँ और हमारी धरती पर का वायुमण्डल भी न जाने कहाँ आकाश गायब हो जाय। चन्द्रमा का पिण्ड हमारी

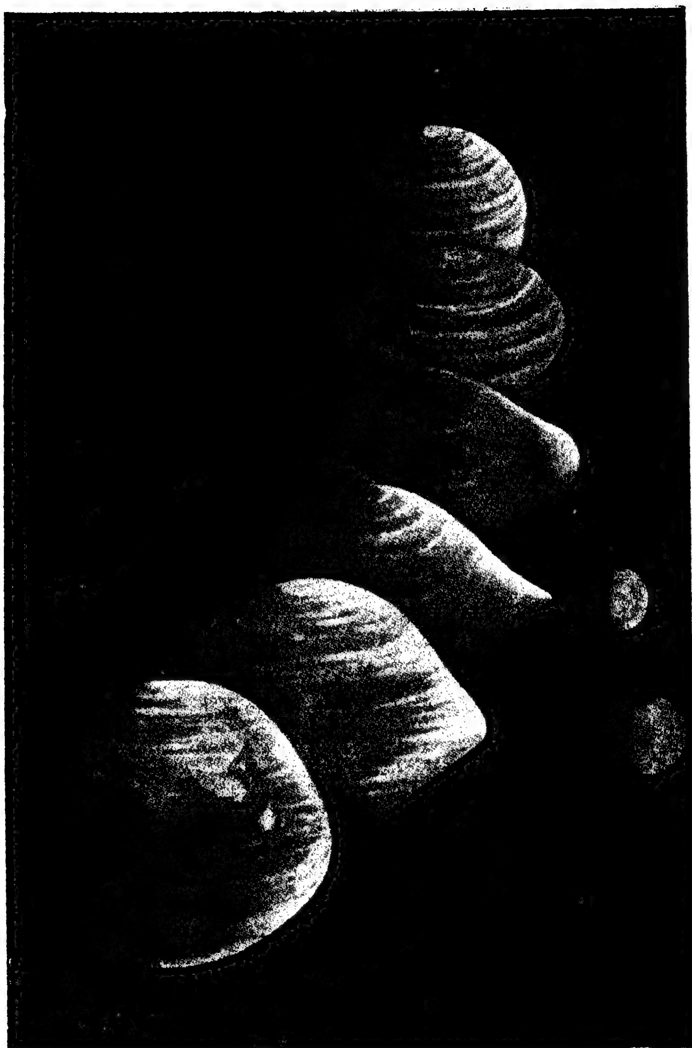
पृथ्वी से छोटा है, इसी कारण उसकी गुरु- त्वाकर्षणशक्ति भी उसी मात्रा में कम है। इसलिए केवल वे ही कण उसके वश में रह सकते हैं जिनकी गति $1\frac{1}{2}$ मील प्रति सेकेण्ड से बहुत कम



[सौरपविार

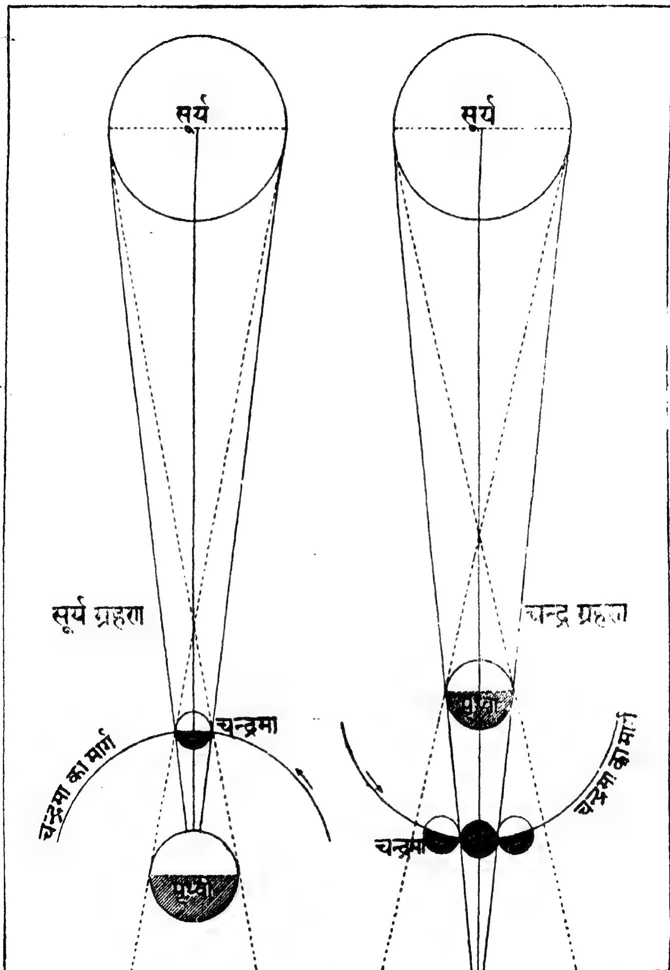
चाँद की सतह का एक काल्पनिक चित्र

हो। इसी कारण वायु चन्द्रमा से लुप्त हो गई। वायुरहित चन्द्रमा में शब्द भी नहीं होता होगा। वहाँ अखण्ड शान्ति रहती होगी। देखने में चन्द्रमा कितना सुन्दर लगता है पर उसकी कितनी भयानक दशा है। शायद ही कोई वहाँ रहना पसंद करे।



चाँद का जन्म संभवतः पृथ्वी से इसी प्रकार हुआ होगा।

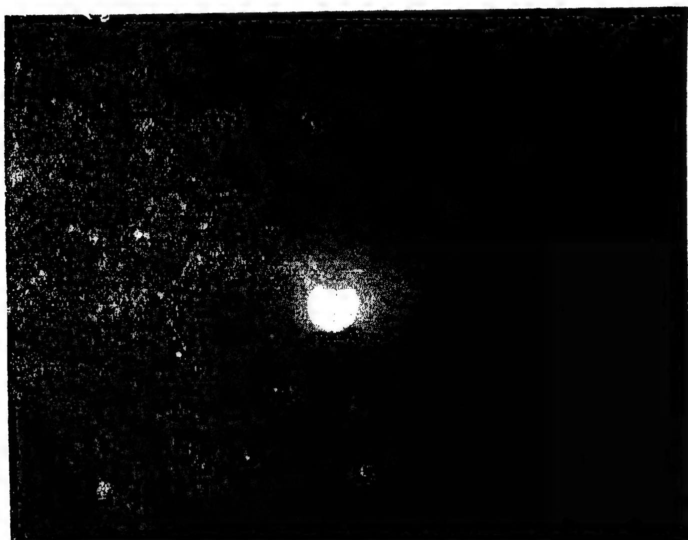
१०—चन्द्रमा की उत्पत्ति—चन्द्रमा की उत्पत्ति कब हुई इस का ठीक-ठीक समय निर्धारित करना कठिन है फिर भी कहते हैं कि पृथ्वी की उत्पति के पश्चात् ही चन्द्रमा का जन्म हुआ होगा। कहते हैं कि आज सेबहुत काल पहले पृथ्वी बहुत तेज़ी से भ्रमण कर रही थी। उस समय उसका पिण्ड या तो गीली मिट्टी की तरह रहा होगा अथवा तरल रूप में। पृथ्वी की अत्यन्त तीव्रगति से अपनी धुरी पर भ्रमण करने के कारण उसके पिण्ड का एक भाग सूर्य की आकर्षणशक्ति से खिंचकर अलग हो गया। धीरे-धीरे कालान्तर में पृथ्वी का पिण्ड ठोस होता गया और उसके पिण्ड का भाग भी उसके चारों ओर घूमता हुआ ठोस हो गया—यही चन्द्र हुआ। पहले का चन्द्रमा पृथ्वी से बहुत निकट दूरी पर भ्रमण करता था, धीरे-धीरे वह दूर होता गया। पृथ्वी और चन्द्र के परस्पर आकर्षण के कारण दोनों पर उथल-पुथल होता रहा। प्रोफ़ेसर टरनर का कहना है कि आज से ५,७०,००,००० वर्ष पूर्व चन्द्रमा एक ही दिन में पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता था। उस समय मास एक ही दिन का होता था! सर जार्ज डारविन ने चन्द्रमा की आयु ५,७०,००,००० वर्ष आँकी है। परन्तु भूगर्भ-विद्या-विशारद कहते हैं कि यह अन्दाज कम है। डाक्टर जेफ़रीस (Jefferys) का अनुमान है कि चन्द्र की उत्पत्ति कम से कम ४,००,००,००,००० वर्ष पहले हुई। कहते हैं कि आज से १,६०,००,००,००० वर्ष पूर्व पृथ्वी अपनी धुरी पर २० घण्टे में घूमती थी। चन्द्रमा का पिण्ड दक्षिणी



चन्द्र और सूर्य ग्रहण कैसे लगता है।

गोलार्ध से निकला हुआ माना जाता है क्योंकि पृथ्वी के इस भाग में समुद्र ही समुद्र अधिक है, भूमि कम।

११—**ग्रहण के कारण**—चन्द्र में ग्रहण लगते आपने देखा होगा। इसी तरह सूर्य में भी ग्रहण लगता है। हमारी पृथ्वी

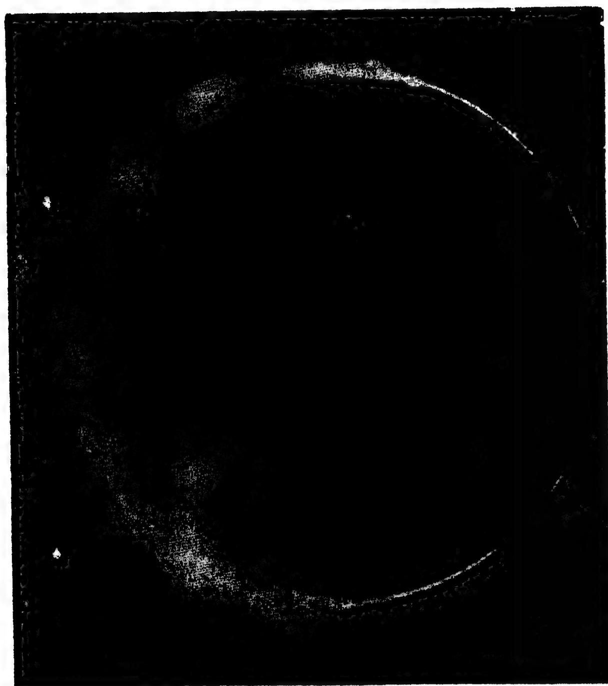


[सौरपरिवार

साधारण सूर्य ग्रहण का एक फोटो

से दोनों ही दिखाई पड़ते हैं। ग्रहण क्यों लगते हैं, ग्रहण हैं क्या ?—आदि बातें पूछी जा सकती हैं। प्राचीन समय में लोग ग्रहण का कारण नहीं समझ पाते थे इसलिये वे तरह-तरह की कल्पना करते थे। कुछ लोग अभी तक विश्वास करते हैं कि

राहु नामक राक्षस जब चन्द्र या सूर्य को ग्रस लेता है तो ग्रहण लग जाता है। सूर्य और चन्द्रमा को इस विपत्ति से बचाने के लिए लोग दान-पुण्य करते हैं। हमारे देश में तो इन अवसरों पर

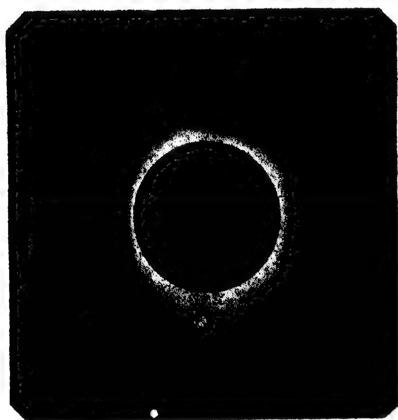


उग्रह का एक दृश्य [सौरपरिवार

लोग गंगा नहाते और दान करते हैं। ये सब तो विश्वास और प्राचीन समय की सभ्यता की स्मृति मात्र हैं। ज्योतिष के अनुसार ग्रहण कोई आकस्मिक विपत्ति नहीं वरन् यह बराबर होने

वाली विश्व की साधारण घटना है। गणित से हिसाब लगाकर ज्योतिषी पहले बतला देता है कि कब किस समय ग्रहण लगेगा और उसका कितना अंश पृथ्वी के किस हिस्से से दिखाई पड़ेगा।

आप समझते होंगे ग्रहण क्यों लगते हैं। साधारण तौर से यह स्मरण रखें कि जब चन्द्रमा, सूर्य और पृथ्वी के बीच



सर्वसूर्य ग्रहण का एक फोटो [सौरपरिवार

में आ जाता है तो पृथ्वी के कुछ भागों में सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता उस समय वहां सूर्य का उतना भाग कटा हुआ दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार जब पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य के बीच में पड़ जाती है तो पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर पड़ती है और चन्द्रमा का उतना हिस्सा अप्रकाशित रहता है, इसी से हमें वह कटा हुआ दिखाई पड़ता है। (पृष्ठ ९२ पर दिये चित्र को देखिए।)

आप यह न भूलें कि सूर्यग्रहण सदा अमावस्या के दिन लगता है क्योंकि उसी तिथि को चन्द्रमा, सूर्य और पृथ्वी के बीच रहता है। इसी तरह चन्द्रग्रहण भी सदा पूर्णिमा के दिन लगेगा क्योंकि उसी तिथि को चन्द्र और सूर्य के बीच पृथ्वी रहती है। इन ग्रहणों के बारे में यह भी स्मरण रखने की बात है कि सूर्यग्रहण का फेरा ६५८५$\frac{१}{३}$ दिन में होता हैं। मान लीजिए कि आज सूर्यग्रहण लगा और भारतवर्ष में वह दिखाई पड़ा, तो फिर ठीक इसी प्रकार का सूर्यग्रहण (आधा, वा सर्वग्रास) फिर १८ वर्ष ११$\frac{१}{३}$ दिन बाद (१०$\frac{१}{३}$ दिन यदि लीप इयर हुआ) लगेगा।

अब आप समझ गये होंगे कि ग्रहणों का भी चक्र होता है। हमारे इस कथन का यह मतलब न लगावें कि १८ वर्ष ११$\frac{१}{३}$ दिन में केवल एक ही सूर्य-ग्रहण होगा, वरन् यह कि जिस प्रकार का ग्रहण आज लगेगा वह पुनः १८ वर्ष ११$\frac{१}{३}$ दिन बाद ही लगेगा। प्रायः प्रतिवर्ष दो सूर्य (सर्वग्रास) ग्रहण पड़ते हैं—इससे अधिक भी हो सकते हैं पर वे पूरे नहीं होंगे। चन्द्र-ग्रहण ज्यादा नहीं पड़ते। एक साल में तीन से अधिक नहीं। कभी-कभी साल में एक भी नहीं पड़ता। परन्तु जब कभी चन्द्र का पूरा ग्रहण लगेगा तब पृथ्वी के आधे से अधिक भाग में वह दिखाई पड़ेगा।





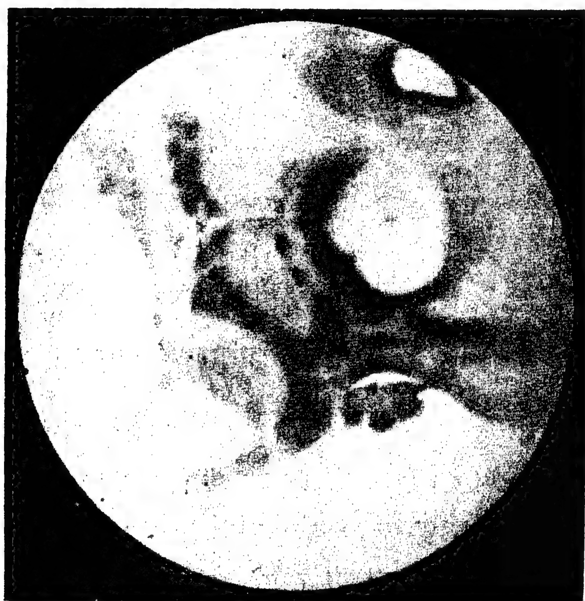
[सौरपरिवार

मंगल की नहरों का चित्र

७—मंगल और अवान्तर ग्रह

१—**मंगल**—सूर्य के ग्रहों में बुध, शुक्र और पृथ्वी के बाद मंगल की कक्षा है। देखने में यह ग्रह अंगारे के समान लाल चमकता हुआ दिखाई पड़ता है। हर दूसरे साल [२ वर्ष १ महीना १८-७ दिन] यह हमें अच्छी तरह दिखाई पड़ता है। मंगल के विषय में बड़ी-बड़ी आश्चर्य्यजनक बातें सुनने को मिलती हैं। पृथ्वी के निकट होने के कारण लोगों का अनुमान है कि मंगल पर भी हमारी पृथ्वी ही की तरह आदमी बसते होंगे। मंगल सूर्य से १४,२०,००,००० मील की दूरी पर रहकर उसकी प्रदक्षिणा करता है। कभी-कभी यह पृथ्वी से ३,५०, ००,००० मील की दूरी पर आ जाता है। मंगल का व्यास

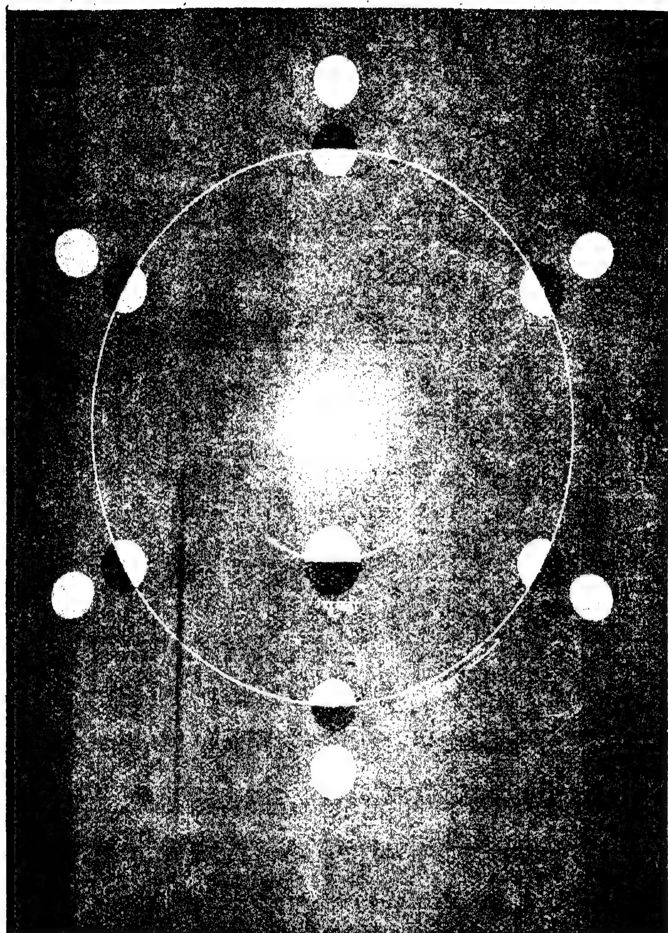
हमारी पृथ्वी से छोटा है—४२३० मील। इसका वज़न पानी से ३.५८ (करीब ३½) गुना भारी है। मंगल अपनी कक्षा पर ६८७ दिनों में घूम जाता है। इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि मंगल-निवासियों का वर्ष हमारे वर्ष के अनुसार



[सौरपरिवार

मंगल का एक फोटो

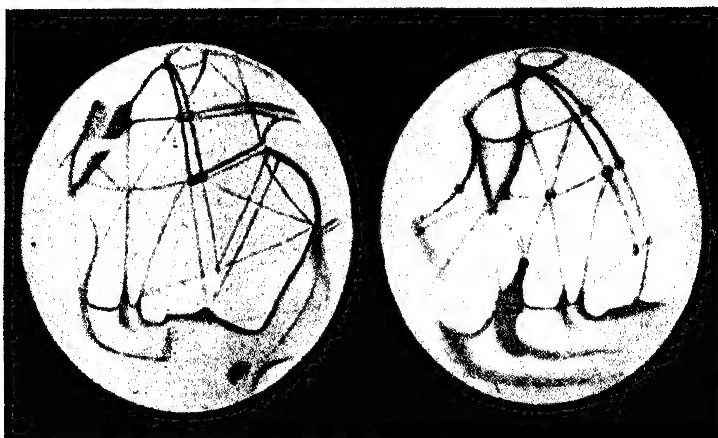
२ वर्ष २२ दिनों का होता होगा। और इनका दिन हमारी तरह ही २४½ [२४ घंटे ३७½ मिनट] घंटों का होता है। इससे पता चलता है कि मंगल अपनी धुरी पर करीब उसी गति से घूमता रहता है जैसे हमारी पृथ्वी।



[सौरपरिवार

मंगल की कलाएँ

२–मंगल का रूप—आप समझ गये कि आयतन में मंगल हमारी पृथ्वी से छोटा है—करीब नवें भाग के बराबर—इस लिए उसकी आकर्षण शक्ति हमारी पृथ्वी की अपेक्षा केवल $\frac{3}{8}$ (करीब तिहाई) ही है। इसका फल यह होगा कि मंगल पर सभी



[सौरपरिवार

मंगल ग्रह का एक चित्र—रेखाएँ ही नहरें मानी गईं थीं।

वस्तुएँ हमारे यहाँ की अपेक्षा हल्की होंगी। यहाँ का ढेठ (१$\frac{1}{2}$) मन का आदमी मंगल पर करीब $\frac{1}{2}$ मन का ही ठहरेगा और वह सात गुना अधिक काम करेगा। मंगल पर सभी चीजें हल्की जान पड़ेंगी। यदि आप मंगल को देखना चाहें तो उसे सूर्यास्त के समय देखें। यह फिर सवेरे तक जाकर अन्तर्ध्यान होता है। मंगल में भी हमें कलाएँ दिखाई पड़ती हैं, परन्तु उनका रूप

दूसरी तरह का होता है। वे धनुषाकार नहीं होतीं वरन शुक्लपक्ष की एकादशी के चन्द्रमा की तरह।

३—**मंगल की नहरें**—दूरबीन से मंगल का धरातल देखा जा सकता है। उस पर वायुमण्डल का होना पाया जाता है। यदि आप दूरबीन से देखेंगे तो आपको मंगल की सतह का अधिक अंश लाल देखाई पड़ेगा। ज्योतिषी लोगों का कहना है कि यह मरूभूमि है जो लाल दिखाई पड़ती है। यही कारण है कि हमें भी आँखों से देखने पर मंगल लाल दिखाई पड़ता है। इस मंगल के मरूभूमिप्रदेश में कहीं-कहीं हरी धारियाँ दिखाई पड़ती हैं जिन के विषय बड़े-बड़े अन्दाज़ लगाये जा रहे हैं। कुछ लोग तो पहले इन्हें समुद्र मानते थे। कुछ दिनों बाद यह सिद्ध हुआ कि ये धारियाँ समुद्र नहीं हो सकतीं क्योंकि ये मंगल के धरातल पर बराबर फैली हुई दिखाई पड़ती हैं। फिर कुछ लोगों ने यह कहा कि ये धारियाँ नहरें हैं जो मंगल-वासियों ने बना रखी हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि मंगल पर रहने वाले लोग बड़े चतुर होंगे। मंगल पर पानी की कमी जान पड़ती है। फोटो लेने पर मंगल के केवल उत्तरीध्रुव प्रदेशों में हिम-प्रान्त दिखाई पड़ता है। संभव है इसी हिमप्रदेश से नहरें निकाल कर मंगल निवासियों ने अपनी भूमि को हरी-भरी करने का प्रयत्न किया हो। ऐसा होना असंभव तो नहीं है परन्तु इस नहरवाली बात को मानने में कई कठिनाइयाँ हैं। पहली बात तो यह कि पृथ्वी से दिखाई पड़ने के लिए इन नहरों की चौड़ाई

कम से कम १५-२० मील होनी चाहिए। इतनी चौड़ी नहरें तो असंभव ही प्रतीत होती हैं। लौवेल (Lowell) महोदय ने उसका उत्तर यह दिया कि हमारी धरती से जो दिखाई पड़ता है वे सब



[सौरपरिवार

लॉवेल

नहरे नहीं हैं—अर्थात् वे सब पानी से भरी नहीं है वरन् उनके मध्य भाग में पानी होगा और उसके आस-पास की हरियाली हमें दिखाई पड़ती होगी। दूसरी शंका यह होती है कि नहरों को

मरुप्रान्त में से ले जाने के लिए उन्हें ज़मीन के भीतर से पाइप में होकर ले जाना पड़ेगा, क्योंकि आप जानते हैं मंगल पर वायु-मण्डल पतला है और इससे पानी शीघ्र उड़ जाता है। इन सब बातों के कारण अब लोग यह मानते हैं कि मंगल पर दिखाई पड़ने वाली धारियाँ वास्तव में नदी की उपत्यकाएँ या घाटियाँ हैं। उनके आस-पास की भूमि तो मरुभूमि में परिणत हो गई है परन्तु उनका चिन्ह अभी बाकी है। उसमें अवश्य हरियाली रहती है।

४—मंगल का वायु-मण्डल—मंगल पर की रेखाएँ कभी मोटी कभी पतली दिखाई पड़ती हैं। लोगों का कहना है कि ये हरियाली के घटने-बढ़ने के कारण होती हैं। इससे मानना पड़ेगा कि मंगल पर पेड़-पौधे अवश्य होते होंगे। मंगल की आब-हवा अनुकूल होगी तभी वनस्पति का होना हो सकेगा। कहते हैं यहाँ रात में सरदी होती होगी, दिन में गरमी और यहाँ थोड़ा बहुत पानी अवश्य होगा। रश्मिविश्लेषक यंत्र से परीक्षा करने पर पता चलता है कि मंगल के वायु-मण्डल में ओजन गैस (Oxygen) मिलता है। इससे वनस्पति का होना प्रतीत होता है। मंगल की सतह का पूरा चित्र नहीं लिया जा सका। इसका कारण यह है कि मंगल का वायु-मण्डल चमकीला है। कभी-कभी मंगल के वायु-मण्डल में बादल भी देखे जाते हैं। इनमें दो प्रकार के बादल होते हैं। एक सचमुच के मेघ-मण्डल जो चमककार सफ़ेद होते हैं दूसरे पीले रंग के

रेगिस्तानी बवंडर जो नीले रंग के होते हैं। इससे प्रमाणित होता है कि मंगल पर वायु-मण्डल अवश्य है। वहाँ ऋतुएँ भी होती हैं। क्योंकि मंगल की धुरी अपनी कक्षा पर झुकी हुई है और उसके ध्रुवप्रदेश क्रम से सूर्य की ओर झुकते रहते हैं। परन्तु वहाँ की ऋतुएँ हमारे यहाँ अधिक महीनों की होंगी क्योंकि मंगल का वर्ष २४ मास का होता है।

५–क्या मंगल पर प्राणी हैं—मंगल पर हमारी धरती की भाँति जीव हैं या नहीं ? इस प्रकार का प्रश्न मंगल के विषय में किया जाता है। इसका कारण यही है कि मंगल की परिस्थितियाँ हमारी पृथ्वी जैसी हैं। वहाँ वायु-मण्डल है, ध्रुवप्रदेशों में हिमाच्छादित भूमि भी चमकती हुई दिखाई पड़ती है। इन बातों से लोगों का ख्याल है कि मंगल पर जीव अवश्य होंगे। परन्तु वे प्राणी कैसे होंगे ? मंगल पर जो प्राणी होंगे वे अवश्य हमारी पृथ्वी से भिन्न होंगे, क्योंकि उनकी बुद्धि हमसे अधिक विकसित होगी। मंगल पर आकर्षण शक्ति भी कम है, वायु का दबाव कम है, ताप भी कम है, इसलिए वहाँ के लोग अवश्य हमारे यहाँ के ध्रुवप्रदेश के निवासियों के समान होंगे। इस सारी कल्पना का कारण मंगल पर दिखाई पड़ने वाली धारियों का होना है। लोगों ने उन्हें कृत्रिम नहरें मान लिया जिससे कल्पनाशील मनुष्यों को मौका मिल गया और वे अनुमान करने लगे कि मंगल पर मनुष्य अवश्य होंगे। परन्तु इधर के कई विद्वान इसे मानने के लिए तय्यार नहीं है कि मंगल पर दिखाई पड़ने-

वाली धारियाँ नहरें हैं। इस लिए लोगों का कहना है कि अधिक-से-अधिक, मंगल पर पेड़-पौधे हो सकते हैं क्योंकि वहाँ की वायु में ओज़न गैस वर्तमान है। हिमप्रदेशों में जल के भी होने की संभावना है। परन्तु एक तरह से मंगल अब मृतप्राय हो रहा है। उस की तापशक्ति कम हो रही है, उस पर जल का अभाव हो रहा है। उसकी सतह धीरे-धीरे मरुभूमि में परिणत हो

मंगल ग्रह का एक चित्र जिसमें ध्रुव प्रदेश हिम के कारण सफ़ेद दाग सा लगता है।



[सौरपरिवार

रही है। वायु-मण्डल के घनत्व के कम होने के कारण तथा आर्कषण शक्ति की कमी के कारण मंगल पर पानी भी कम होता जा रहा है। पृथ्वी के पिण्ड से छोटा होने के कारण वह पृथ्वी की अपेक्षा शीघ्र ही--चाँद की तरह—वायु-मण्डलरहित मरुप्रदेश हो जायगा और संभव है उसपर सदा के लिए नीरव हिमराज्य स्थापित हो जाय !

६–मंगल के दो उपग्रह वा चाँद—आप को यह सुनकर आश्चर्य्य होगा कि मंगल पर दो चाँद हैं। परन्तु हमारे चाँद के समान वे नहीं हैं। वे छोटे और मंगल के समीप ही रहकर घूमते रहते हैं। मंगल के दो चाँदों का पता तो सन् १८७७ में लगा। उसके पता लगाने वाले थे आसफ़ हॉल महोदय। इन दोनों उपग्रहों के नाम करण हुए—फोबस और डीमॉस। यूरोप में मंगल या Mars युद्ध का देवता माना जाता है। इस देवता के दो कुत्ते हैं जिन का नाम फ़ोबस (Phobos) और डीमॉस (Deimos) है। इसी कारण मंगल के दो उपग्रह या चाँदों का नाम भी फोबस और डीमॉस पड़ा। इन दोनों चाँदों में फोबस मंगल के समीप रहता है। फिर भी यह मंगल से ४,००० मील पर रहता है। इसमें प्रकाश काफ़ी है और इसे मंगल की प्रदक्षिणा करने में केवल ७ घण्टे ३९ मिनट लगते हैं। ज़रा सोचिए तो—मंगल पर रात—१२ घण्टे से अधिक होती है, परन्तु चाँद ७½ घण्टे में अपना मास पूरा कर लेता है! इस चाँद (फोबस) का व्यास १० मील से कुछ ही अधिक होगा। मंगल से केवल ४,००० मील की दूरी पर होने के कारण यह मंगल पर से हमारे चाँद के तिहाई आकार का सा लगता होगा।

फोबस की कक्षा को घेरता हुआ मंगल का दूसरा चाँद डीमॉस मंगल से १२,००० मील पर अपनी कक्षा बनाता है। डीमॉस का आकार फोबस के आधे के बराबर है अर्थात् ५ मील के व्यास का। और यह रहता है मंगल से १२,००० मील पर!

इससे यह बहुत ही छोटा [जितना बड़ा हमें शुक्र दिखाई पड़ता है] दिखाई पड़ता होगा। डीमॉस मंगल की प्रदक्षिणा ३० घण्टे २० मिनट में करता है।

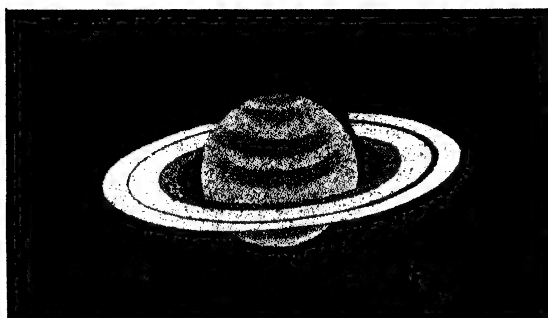
मंगल पर यदि मनुष्य होंगे तो उन्हें इन दोनों चाँद की अद्भुत लीला दिखाई पड़ती होगी। एक तो पच्छिम में उगता होगा और पूरब में डूबता होगा और ७½ घण्टे ही में वह अपनी पूरी कलाएँ—अमावस्या से पूर्णिमा तक—दिखा देता होगा। कभी-कभी तो फोबस रात में दो बार उगता होगा। डीमॉस कभी-कभी तीन दिन तक डूबता ही न होगा—और इसी बीच उसकी सभी कलाएँ दिखाई पड़ जाती होंगी! मंगल के ये दोनों चाँद हमें आँखों से नहीं दिखाई पड़ते परन्तु दूरबीन से वे देख जा सकते हैं।

७—अवान्तर ग्रह—मंगल के बाद सूर्य के ग्रहों में बृहस्पति आता है। परन्तु मंगल और बृहस्पति की कक्षा में बहुत दूरी देखकर लोगों को संदेह हुआ कि इस शून्य प्रदेश में अवश्य कोई और पिण्ड होगा। इस लिए ज्योतिषी लोग इस शून्य प्रदेश की देख-भाल करने लगे। कुछ दिनों बाद मंगल और बृहस्पति की कक्षा के भीतर बहुत से छोटे-छोटे पिण्ड-समूह देख गये। इन्हें अवान्तर ग्रह कहते हैं। सन् १९३१ तक करीब २,००० छोटे-छोटे अवान्तर ग्रहों का पता लग चुका है। इनमें कुछ तो बहुत ही छोटे-छोटे हैं—तीन मील तक के व्यास के कुछ बड़े ५०० मील तक के व्यास के भी हैं।

इन अवान्तर ग्रहों के बारे में कहा जाता है कि इन ग्रहों की उत्पत्ति किसी बड़े पिण्ड के टूटने से हुई है। कुछ लोग कहते हैं कि नहीं, एक से अधिक पिण्डों के टूटने से ये बने हैं। इन अवान्तर ग्रहों पर आकर्षण शक्ति इतनी कम होगी कि यदि वहाँ से कोई चीज़ फेंकी जा सके तो वह आसानी से हमारी पृथ्वी तक पहुँच सकती है। और उनका वज़न क्या होगा ? कहते हैं यदि सब अवान्तर ग्रह एक साथ रख दिया जाँय तो उनका तौल हमारी पृथ्वी से $\frac{१}{१००००}$ वीं अंश ही होगा।

अवान्तर ग्रहों में सीरिस का व्यास ४८० मील है। इस का पता सन् १८०१ में लगा था। इसकी खोज करने वाले सिसली निवासी पियाज़ी नामक एक महोदय थे। एक वर्ष बाद पल्लस और जूनो का पता लगा। सन् १९३२ में देखा गया कि एक अवान्तर ग्रह शुक्र और पृथ्वी की कक्षा के भीतर जा पहुँचा है और सूर्य से करीब २०,००,००० मील की दूरी पर था। ईरस नामक अवान्तर ग्रह कभी-कभी हमारी पृथ्वी से १,४०,००,००० मील की दूरी पर आ जाता है। इन अवान्तर ग्रहों की कक्षा दीर्घ-वृत्त होती है।





शनि

६—बृहस्पति और शनि

१--बृहस्पति—बृहस्पति और शनि सौरपरिवार के ग्रहों में सबसे भारी पिण्ड हैं। बृहस्पति तो सबसे प्रकाश-मान है। हर तेरहवें महीने बृहस्पति पूर्व दिशा में संध्या के समय उदय होकर रात भर दिखलाई पड़ता रहता है। इस का रंग कुछ पीला रहता है। बृहस्पति की कक्षा अवान्तर ग्रहों को घेरे रहती है। सूर्य से यह ग्रह ४८,३०,००,००० मील की औसत दूरी पर रहता है। बृहस्पति के पिण्ड का व्यास ८८,६४० मील है अर्थात् पृथ्वी के व्यास से इसका व्यास ११ गुने से भी बड़ा। यह ग्रह इतना बड़ा है कि समस्त ग्रह मिल कर भी इससे आयतन में छोटे ही ठहरेंगे! इतने बड़े आकार का होने पर भी बृहस्पति की गति बड़ी तेज़ है। यह अपनी धुरी पर करीब १० [९ घण्टे ५५ मिनट] घण्टे में ही घूम जाता है। बृहस्पति पर दिन-रात दोनों इसी लिए १० ही घण्टे में व्यतीत हो जाती है। पाँचघण्टे का दिन कैसा

होगा ? इस की भयानक गति का अनुमान क्या आप कर सकते हैं ? यदि नहीं तो सुनिए। हमारी पृथ्वी पर के नगर पृथ्वी के घूमने के कारण प्रति मिनट १७ मील चलते हैं परन्तु बृहस्पति पर उनकी गति ५०० मील प्रति मिनट होगी।



[सौरपरिवार

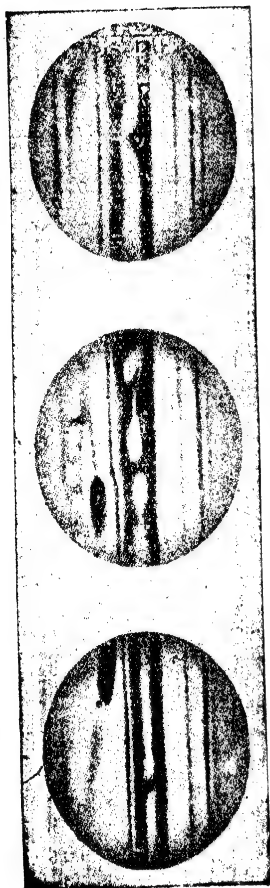
बृहस्पति

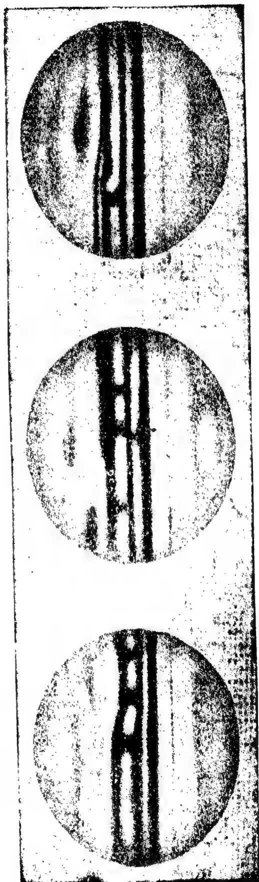
२–बृहस्पति का पिण्ड—बृहस्पति की इस प्रचन्ड गति का फल यह हुआ है कि उसका पिण्ड पृथ्वी की अपेक्षा अधिक चिपटा हो गया है। पृथ्वी के एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक का व्यास उसके

मध्य भाग के व्यास से २७ मील छोटा है परन्तु बृहस्पति के ध्रुव प्रदेशों का व्यास २,००० मील छोटा है! बृहस्पति अपनी कक्षा पर पूरा चक्कर १२ वर्षों में करता हैं। इस प्रकार हमारे १२ वर्ष के बराबर बृहस्पति एक साल होता है परन्तु उसका दिन तो केवल ५ घण्टों का होता है! बृहस्पति के वर्ष में बृहस्पति के १०,५०० दिन होते होंगे और हमारे यहाँ तो ३६५ दिन का साल होता है। सूर्य की भाँति बृहस्पति का पिण्ड गैस का मालूम होता है। उसके ध्रुवप्रदेश कटि प्रदेश की अपेक्षा जल्दी [९ घण्टे ५० मिनट] घूमते हैं।

हमारी धरती से तुलना करने पर बृहस्पति का पिण्ड ३१४ गुना ठहरेगा। जो वस्तु हमारी पृथ्वी पर १½ मन की होगी वह बृहस्पति पर ३½ मन की ठहरेगी। बृहस्पति का आयतन (Volume) हमारी धरती से १३०० गुना बड़ा है। बृहस्पति भी शुक्र की भाँति बहुत चमकीला है। आप आसानी से उसे पहचान सकते हैं।

३–बृहस्पति की सतह—दूरदर्शक यंत्र से देखने पर बृहस्पति की सतह नहीं दिखाई पड़ती। सदा वह बादलों से ढका हुआ मिलता है। उसके पिण्ड पर बहुत सी धारियाँ ज्योतिषी लोगों ने देखीं पर वे धारियाँ बहुत दिनों तक टिकी नहीं रहीं। इसलिए बृहस्पति की सतह की क्या दशा है, वहाँ की भूमि कैसी है आदि बातों का पता नहीं लग सका। बृहस्पति के पिण्ड के विषय में लोगों का ख्याल था कि यह भी

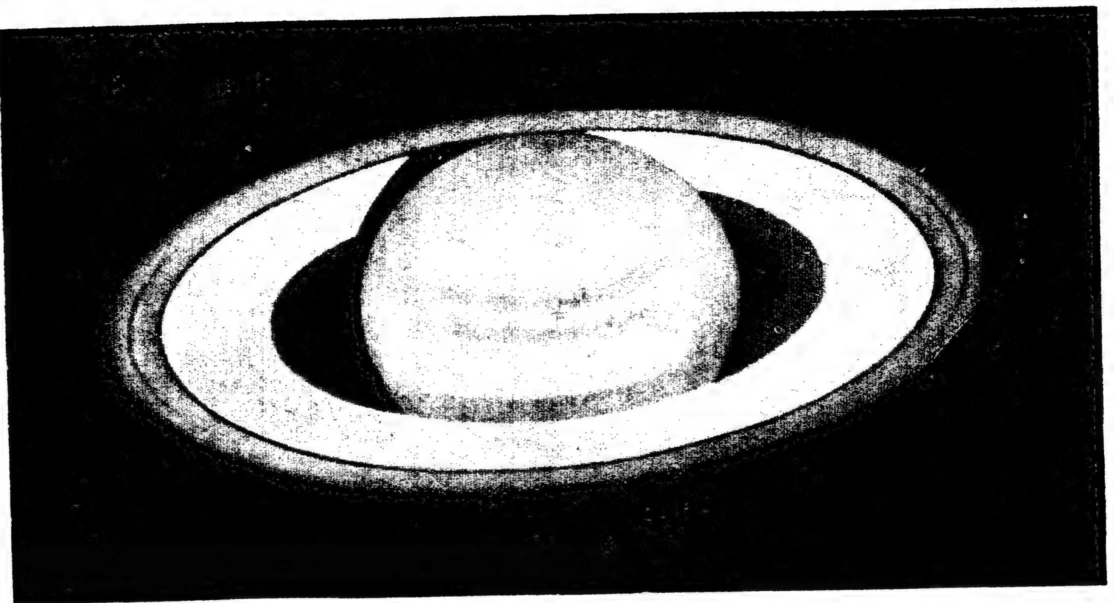




बृहस्पति के कुछ चित्र जिनसे उसकी सतह पर की आकृति के बदलते रहने का ज्ञान हो सकता है

सूर्य की तरह गरम है परन्तु यह बात पीछे असत्य प्रमाणित हुई। बृहस्पति सूर्य से इतनी दूर है कि पृथ्वी की अपेक्षा उसे सूर्य का केवल $\frac{१}{२७}$ भाग ताप और प्रकाश मिलता होगा। कदाचित बृहस्पति से सूर्य एक बहुत छोटे तारे की तरह दिखलाई पड़ता होगा। बृहस्पति का वज़न पानी से कुछ ही भारी होगा। सूर्य से अत्यन्त दूर रहने के कारण बृहस्पति का तापक्रम कम है। परीक्षा करने पर पता चलता है कि बृहस्पति के ऊपर जो बादल छाये रहते हैं उनका तापक्रम २२०° फ़ के करीब होगा। इसीलिए लोगों का अनुमान है कि वे बादल पानी के नहीं होंगे वरन् कारबन द्विओषिद (Carbon Dioxide) गैस के होंगे। ये गैस प्रायः ठंडे होते हैं। इसी कारण बृहस्पति के पिण्ड के बारे में लोगों का अनुमान है कि बृहस्पति हल्के हाइड्रोजन के तत्वों का बना है। रश्मिविश्लषक-यंत्र से पता चलता है कि बृहस्पति पर मिथेन (Methane) और अमोनिया (Ammonia) वर्तमान हैं। मिथेन, शनि, उरण और वरुण ग्रहों में भी देखा गया है। ये गैस बहुत कम तापक्रम पर रहते हैं।

४–बृहस्पति के उपग्रह—हमारी पृथ्वी पर एक चाँद इतनी सुन्दरता बिखेरता है, जहाँ नौ चाँद हो वहाँ की सुन्दरता की कल्पना आप कर सकते हैं। बृहस्पति पर नौ चन्द्रमा हैं। इनमें चार तो हमारे चाँद से बड़े और दो मंगल ग्रह से भी बड़े हैं। इनका पता पहले-पहल गैलीलियो को लगा था। यदि आपके पास छोटी-सी भी दूरबीन हो तो आप बृहस्पति के चार बड़े

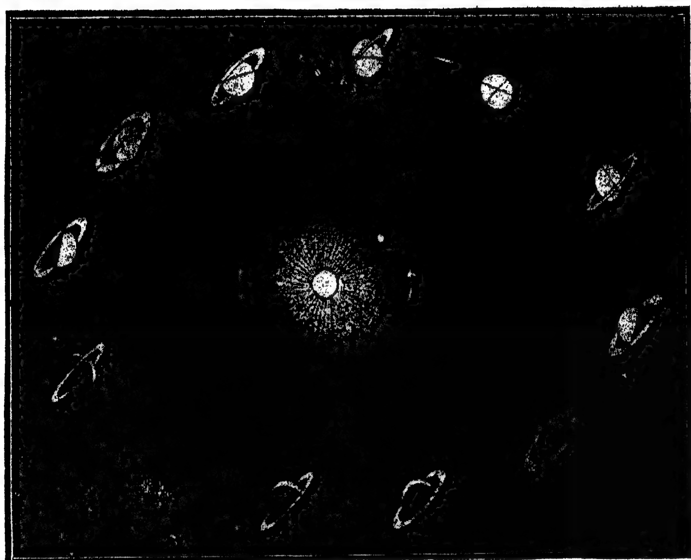


शनि ग्रह का एक चित्र

चन्द्रमाओं को देख सकते हैं। इनके नाम हैं—आयो, यूरोपा, गैनीमीड़ और कैलिस्टो। इन उपग्रहों में कैलिस्टो तो बृहस्पति की परिक्रमा ६½ दिन में करता है। शेष उससे भी कम समय में। आयो का मास तो १¾ दिन के बराबर है—यानी केवल ४२ घण्टे का! बृहस्पति के शेष [illegible] चाँदों का आकार बहुत ही छोटा है। इनका प्रकाश भी कम है। उनके व्यास की माप १०० मील से २५ मील तक है। ज़रा २५ मील के चन्द्रमा के पिण्ड का अनुमान तो कीजिए। बृहस्पति के नौ चाँदों में तो दो विचित्र आचरण वाले हैं। ये अन्य सात की अपेक्षा उल्टी दिशा में भ्रमण करते हैं। इस विचित्रता के कारण ज्योतिषी लोग कहते हैं कि ये दो उपग्रह बृहस्पति के पिण्ड से नहीं बने वरन् अवान्तर ग्रहों में से बृहस्पति के आकर्षण पाश में आ गये हैं।

५--शनि—बृहस्पति के बाद शनि उसकी कक्षा को घेरता हुआ सूर्य से ९०,००,००,००० मील की औसत दूरी पर रहकर उसकी प्रदक्षिणा करता है। शनि का व्यास ७४,१६३ मील है। इसका पिण्ड पृथ्वी से ९४ गुना भारी है। पानी की अपेक्षा इस का वज़न आधे से कुछ अधिक है। यदि शनि के पिण्ड को पानी में डाल दिया जाय तो शायद वह लकड़ी की तरह उतराने लगे! शनि का अर्थ है धीरे-धीरे चलनेवाला। इसी से इसका नाम शैनश्चर पड़ा क्योंकि यह सूर्य की प्रदक्षिणा २९½ वर्षों में करता है। बहुत दूर रहने के कारण शनि को हमारी पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से केवल $\frac{१}{१००}$ गरमी और प्रकाश मिलता है।

शनि अपनी धुरी पर १० घण्टे १४ मिनट में घूम जाता है इस लिए वहाँ का दिन-रात १०½ घण्टे का ही होता है। और



['सौरपरिवार']

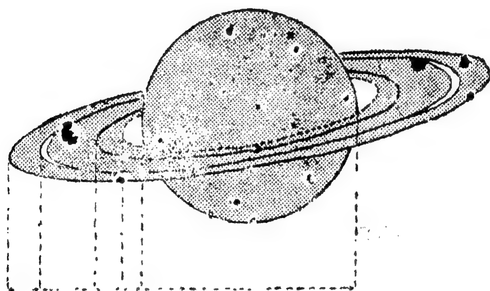
सूर्य की प्रदक्षिणा करते हुए शनि के बलय हमें इस प्रकार दिखाई पड़ते हैं।

शनि का साल तो हमारे वर्षों की तरह २९½ वर्षों का! जहाँ ३० वर्ष में ऋतुओं की फेरी लगती होगी वहाँ की क्या दशा होगी। ज़रा इसका अनुमान कीजिए! आपने देख लिया कि शनि

अपनी धुरी पर १०¾ घण्टे में घूम जाता है। इसका परिणाम क्या होगा ? बृहस्पति की तरह शनि का पिण्ड भी चिपटा हो रहा है। इसके ध्रुव प्रदेशों का व्यास इसी कारण कटि प्रदेश के व्यास से ८,००० मील कम है। कहते हैं कि बृहस्पति की तरह शनि का पिण्ड भी हाइड्रोजन का होगा। कुछ लोग तो कहते हैं कि शनि का पिण्ड बरफ ही बरफ़ होगा जो आसानी से पानी पर तैर सकता है। यह निश्चय हो गया है कि वह बिल्कुल पत्थर का नहीं है।

६-शनि का विचित्र रूप—यदि आप शनि को दूरबीन से देखें तो आप को विचित्र दृश्य दिखाई पड़ेगा। शनि हमारे चाँद की तरह गोल ही नहीं है, वरन् उसके गोले के चारों ओर एक छल्ला या वलय है, जैसे अंग्रेजी फेल्ट हैट में, जो बीच में गोला होता है, फिर उसको घेरता हुआ एक छल्ला होता। इसी तरह शनि का आकार है। पहले-पहल इस विचित्रता को लोग समझ नहीं पाये थे। सन् १६५५ में हुईजेन्स (Huygens) ने इसका निश्चय किया। उसका कहना था कि शनि के गोल पिण्ड के चारों ओर एक वलय घेरे हुए है। यह वलय या छल्ला व्यास में १,७१,००० मील तक है। पीछे परीक्षा करने पर पता चला कि वलय एक नहीं वरन् कई हैं। ये वलय शनि के पिण्ड को नहीं छूते वरन् शनि के पिण्ड और वलय के बीच ७,००० मील का अन्तर बना रहता है।

७–शनि के वलय क्या हैं?—ये वलय क्या हैं? बहुत दिनों तक लोग, शनि के वलयों के भीतर क्या है, इसका अनुमान लगाते रहे। किसी ने कहा, इनमें पानी है, किसी ने कहा, ये ठोस हैं, किसी ने कहा, ये आग के बने हैं। ये वलय बराबर शनि के साथ घूमते रहते हैं। उन वलयों की मुटाई अधिक नहीं है। अधिक से अधिक यह १० मील होगी। सन् १८५६ में जेम्स



[सौरपरिवार

शनि के वलय अनेक हैं।

क्लार्क मैक्सवेल ने प्रमाणित किया कि शनि के इन वलयों में छोटे-छोटे उल्का या पिण्ड हैं जो स्वतः अपने अक्ष या ध्रुव पर भ्रमण करते हुए शनि के आकर्षण के कारण उसके साथ घूमते रहते हैं। ये छोटे-छोटे पिण्ड इतने छोटे और पास-पास है कि उन्हें अलग-अलग हम देख नहीं सकते। उन वलयों में जो लोग पानी जैसी तरल वस्तु मानते हैं वे भ्रम में हैं। ये वलय

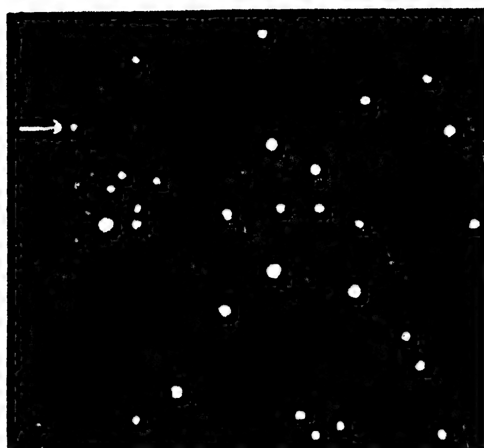
एक ठोस वस्तु भी नहीं हो सकते। क्योंकि ये वलय पारदर्शक हैं और इनके भीतर से अन्य तारे देखे गये हैं। इस प्रकार मैक्सवेल ने यह सिद्ध कर दिया कि वलय में छोटे-छोटे पिण्ड हैं। सन् १७१५ में जैक्स कैसीनो ने भी इसी प्रकार की बात कही थी, परन्तु मैक्सवेल ने ही इसे प्रमाणित किया। इस मत की पुष्टि अब यंत्रों से परीक्षा करने पर भी होती है।

८—शनि के चाँद—शनि का प्रकाश कुछ मैला-मैला सा रहता है। बृहस्पति की तरह शनि के भी उपग्रह हैं और एक दो नहीं। नौ से ऊपर। कुछ लोग कहते हैं कि शनि के १० चाँद हैं। शनि के विचित्र रूप का ध्यान तो कीजिए। बीच में गोल पिण्ड है। उसको घेरे हुए वलय हैं। इनके अतिरिक्त नौ चाँद ! और शनि के उपग्रह भी काफी चमकदार हैं। इन में टाइटन नामक उपग्रह हमारे चाँद के बराबर है—३००० मील व्यास का। सब से छोटे का नाम है फोबे, जिसका व्यास १५० मील का होगा। इन उपग्रहों में कुछ दो दिनों में ही चक्कर लगाते हैं, कुछ महीनों में। सन् १९०५ में मिस्टर पिकरिंग ने शनि के १० वें चन्द्र का पता लगाया। इसका नाम रखा गया टेमिस। परन्तु अभी तक इसके विषय में अधिक नहीं पता लगाया जा सका।

९—नये ग्रहों का पता—सौर-ब्रह्माण्ड का विस्तार—एक ज़माने में शनि ही सौर-ब्रह्माण्ड का अन्तिम ग्रह था, जिसकी कक्षा ही उस ब्रह्माण्ड की सीमा मानी जाती थी। परन्तु अब तो ऐसी

बात नहीं रही। सन् १७८१ में सर विलियम हर्शल ने उरण का पता लगाया। सन् १८४६ में लीवीरर और ऐडम्स ने नेपच्यून या वरुण के विषय में भविष्यवाणी की और सन् १८४६ में गाले (एक जर्मन) ने वरुण को ढूँढ निकाला। कुछ दिनों बाद अमेरिका के लॉवेल वेधशाला में प्लूटो (कुबेर) का पता चला। इन तीनों ग्रहों की खोज से अब सौर-ब्रह्माण्ड का विस्तार बहुत बढ़ गया है। इस प्रकार अब यह ७,६०,००,००,००० मील व्यास का हो गया है।





ज्योतियी गाले ने वरुण को कहाँ देखा था।

९—उरण, वरुण और कुबेर

१—तीन नये ग्रह—उरण या वारुणी, वरुण और कुबेर—इन तीन नये ग्रहों का पता अभी हाल ही में लगा है, यही कारण है कि उनका उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में नहीं मिलता। सप्ताह के दिनों का नाम लीजिए। इनमें रविवार—सूर्य के नाम पर, सोमवार—चन्द्र के नाम पर, मंगलवार—मंगल ग्रह के नाम पर, बुधवार—बुध ग्रह के नाम पर, बृहस्पतिवार—बृहस्पति के नाम पर और शनिवार—शनि ग्रह के नाम पर रखे गये हैं। प्राचीन काल के लोगों को केवल पाँच ग्रहों के नाम मालूम थे। मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि। इनके अतिरिक्त वे सूर्य और चन्द्र को जानते ही थे। यदि उस समय उन्हें उरण (Uranus), वरुण (Neptune) और कुबेर या यम (Pluto) का भी ज्ञान होता तो

शायद वे सप्ताह के दिनों में कुछ का नामकरण इनके नाम पर भी करते। संभव है उस दशा में हमारे सप्ताह में आठ दिन होते वा दस दिन !



[सौरपरिवार

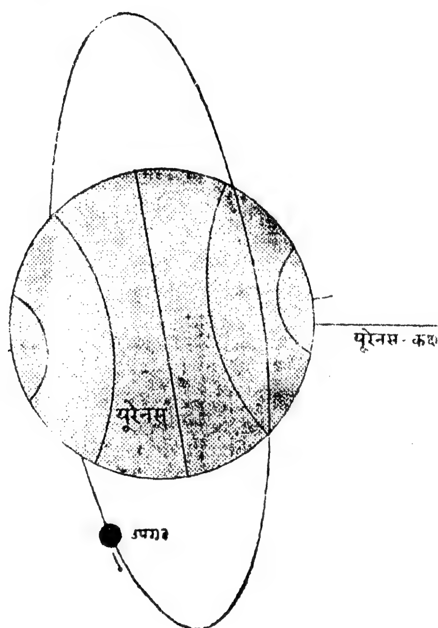
हरशेल

२-उरण—उरण की खोज पहले-पहल सर विलियम हरशेल (Sir William Herschel) ने सन् १७८१ में की। उस समय उन्हें भी भ्रम हुआ कि कहीं यह केतु न हो। परन्तु वर्ष भर पीछे पता लगा कि नहीं यह ग्रह ही है। इस खोज का बड़ी धूम

से स्वागत किया गया और हरशेल का बड़ा सम्मान हुआ। उरण या वारुणी अँधेरी रात में, जब आसमान साफ़ हो, तो आँखों से एक अत्यन्त छोटे तारे की तरह दिखाई पड़ता है। पहले-पहल हरशेल ने इसे अपनी छोटी दूरबीन से देखा था। यह ग्रह सूर्य से १,७८,१९,००,००० मील की दूरी पर अपनी कक्षा बनाता है। उरण की कक्षा शनि की कक्षा के बाहर है। उरण का व्यास हमारी पृथ्वी का चौगुना अर्थात् ३०,१९३ मील है। इस प्रकार उरण का आयतन पृथ्वी का चौसठ गुना होता है। उरण का एक दिन-रात हमारे घण्टों में ११ घण्टे का होता है और वर्ष तो पूरे ८४ सालों के बराबर! जिस दुनिया में साल ८४ वर्षों के बराबर होता होगा वहाँ के लोगों की आयु कितनी होगी?

३–उरण के भीतर—दूरदर्शक यन्त्र से देखने पर भी दूर होने के कारण उरण बहुत छोटा दीखता है। इसलिए उसके धरातल की पूरी परीक्षा नहीं की जा सकी है, फिर भी अनुमान है कि इसकी भी दशा बृहस्पति की तरह ही होगी। इस पर बादल छाये रहते हैं। सम्भव है उरण का तापमान भी बृहस्पति और शनि की ही भाँति हो। उरण का प्रकाश हरा-सा है। इससे पता चलता है कि उरण का वायुमण्डल गहरा है। उरण की धुरी प्रायः उसकी कक्षा में ही है। उरण के विषय में एक विचित्र बात याद रखने की यह है कि उसके भ्रमण की दिशा हमारी धरती की तरह पूर्व की ओर नहीं वरन् पश्चिम की

ओर है। इस कारण उरण पर सूर्य पश्चिम में उगता है और पूरब में डूबता है! कभी-कभी उरण पर सूर्य उत्तर की ओर झुक कर भी निकलता है। इस कारण उरण का उत्तरी ध्रुव कुछ गरम ही रहता होगा।



[सौरपरिवार

उरण की धुरी प्रायः उसकी कक्षा में ही है।

४–उरण के चन्द्रमा—जहाँ बृहस्पति के नौ चन्द्रमा हैं, शनि के दस, वहाँ उरण भी अपनी योग्यता के अनुसार चार चाँद रखता है। इन में दो का पता हरशेल ने स्वयं लगाया था।

दो का लैसल नामक एक उत्साही व्यक्ति ने। इन चन्द्रमाओं की भी उलटी चाल है। इनमें कुछ का व्यास १४०० मील तक, कुछ का ७०० मील तक है। यदि कोई उरण पर जा पहुँचे तो वह देखेगा कि सूर्य उसे वैसा ही छोटा दिखाई पड़ेगा जैसे पृथ्वी से



[सौरपरिवार

विलियम लैसल

शुक्र ग्रह। गरमी तो उरण पर होगी ही नहीं। शायद दोपहर को सूर्य का प्रकाश काफ़ी मिल सके। कहते हैं कि दिन का प्रकाश वहाँ ७०० पूर्णिमा के चन्द्रमाओं के प्रकाश के बराबर होता है। इसलिए उरण पर रोशनी तो काफ़ी होगी पर गरमी नहीं।

अनुमान है कि सम्भवतः वहाँ का वायुमण्डल ठण्ढ के कारण पानी हो गया हो।



ऐडम्स [सौरपरिवार

वरुण के विषय में आप ने गणना की थी।

५—वरुण की खोज—उरण की खोज हो गई तब

ज्योतिषी लोग उसकी कक्षा वा मार्ग निर्देश करने लगे। सब कुछ हिसाब लगाया गया पर उसकी गति में कहीं कुछ कमी दिखाई पड़ने लगी। इस गणना के अनुसार उरण अपनी कक्षा में नहीं पाया गया। तब लोगों को संदेह हुआ कि हो न हो कोई और पिण्ड इस पर अपना आकर्षण प्रभाव डालता है जिसके

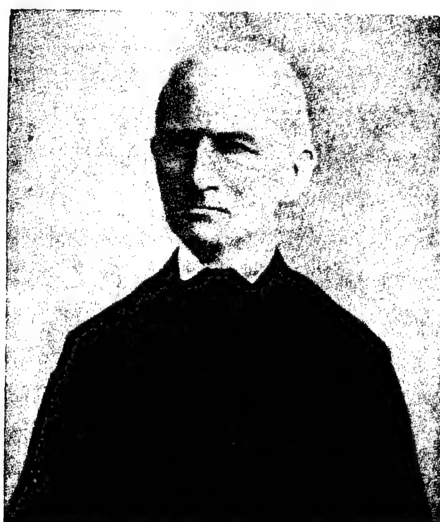


[सौरपरिवार

लेवेरियर

कारण उरण के मार्ग में गड़बड़ी होती है। ज्योतिषी लोग इस नये ग्रह की खोज में लगे। पहले गणित से काम लिया गया। अँग्रेज़ ज्योतिषी एडेम्स और फ्रेंच ज्योतिषी लेवेरियर—दोनों ने गणना करके इसे प्रमाणित किया कि आकाश के अमुक प्रदेश

में कोई नया ग्रह होगा जो उरण की गति में गड़बड़ी उत्पन्न करता है। अन्त में लेवेरियर की सलाह लेकर जर्मन ज्योतिषी गाले ने २३ सितम्बर सन् १८४६ में नये ग्रह की खोज कर डाली। इस प्रकार नये ग्रह का पता लगा और उसका नाम नेपच्यून



[सौरपरिवार

गाले

(Neptune) रखा गया—हम लोग इस वरुण कहते हैं। वरुण सूर्य से पृथ्वी की अपेक्षा ३०.०७ गुना दूर है।

६–वरुण—वरुण या नेपच्यून सूर्य से २,७९,३०,००,००० मील की दूरी पर अपनी कक्षा बनाता है। इसका व्यास ३४,

८२३ मील है। इसका द्रव्यमान पृथ्वी से १६½ गुना बड़ा है। पानी से यह कुछ ही भारी होगा। हमारे यहाँ का १½ मन, वरुण पर १¼ मन ही ठहरेगा। वरुण के विषय में अधिक अभी नहीं जाना जा सका है, परन्तु कहते हैं कि वहाँ का दिन-रात करीब हमारे १६ घण्टों के बराबर होता है। और वर्ष तो हमारे वर्षों में पूरे १६५ वर्षों के बरावर! इस ग्रह की गति की तेज़ी ३⅓ मील प्रति सेकण्ड है। हमारी धरती तो करीब १७ मील प्रति मिनट चलती है।

दूरबीन से देखने पर इसका प्रकाश हरे रंग का दिखाई पड़ता है। अभी तक वरुण के केवल एक उपग्रह का पता लगा है। उसका नामकरण भी अभी नहीं हुआ है, परन्तु उसका व्यास ५००० मील से कम नहीं है—अर्थात् वरुण का चाँद मंगल ग्रह से भी बड़ा है! वरुण से यह २,२०,००० मील पर रहता है। यह ५ दिन २१ घण्टे में परिक्रमा करता है। उरण और वरुण में इतनी समता है कि लोग इन्हें जुड़वाँ कह सकते हैं।

७–कुबेर का पता—सौर-परिवार का अन्तिम ग्रह कुबेर या यम है। इसकी खोज की भी एक कहानी है। जिस प्रकार उरण और वरुण का पता चला—अर्थात् पहले गणित द्वारा फिर दूरबीन से देखकर, उसी तरह प्लूटो वा कुबेर का भी पता लगा। वरुण की खोज के ८४ वर्ष बाद सन् १९३० में ज्योतिषी लोगों ने कुबेर का पता लगाया। बहुत से लोग इस नवीन ग्रह की खोज में लगे थे, परन्तु उनमें पर्सीवल लॉविल का नाम विशेष प्रकार से

उल्लेखनीय है। लॉवेल का सन् १९१६ में देहान्त हो गया। परन्तु इसके एक वर्ष पूर्व उसने अपनी खोज का वृत्तान्त छपा दिया था। उस की मृत्यु के उपरान्त लॉवेल बेधशाला के लोग उसके कार्य को आगे बढ़ाते रहे। अन्त में २१ जनवरी सन १९३० को एक नवीन दूरबीन की सहायता से एक छोटे से नये ग्रह का पता लग ही गया। इसी का नाम आगे चलकर प्लूटो, कुबेर या यम रखा गया।

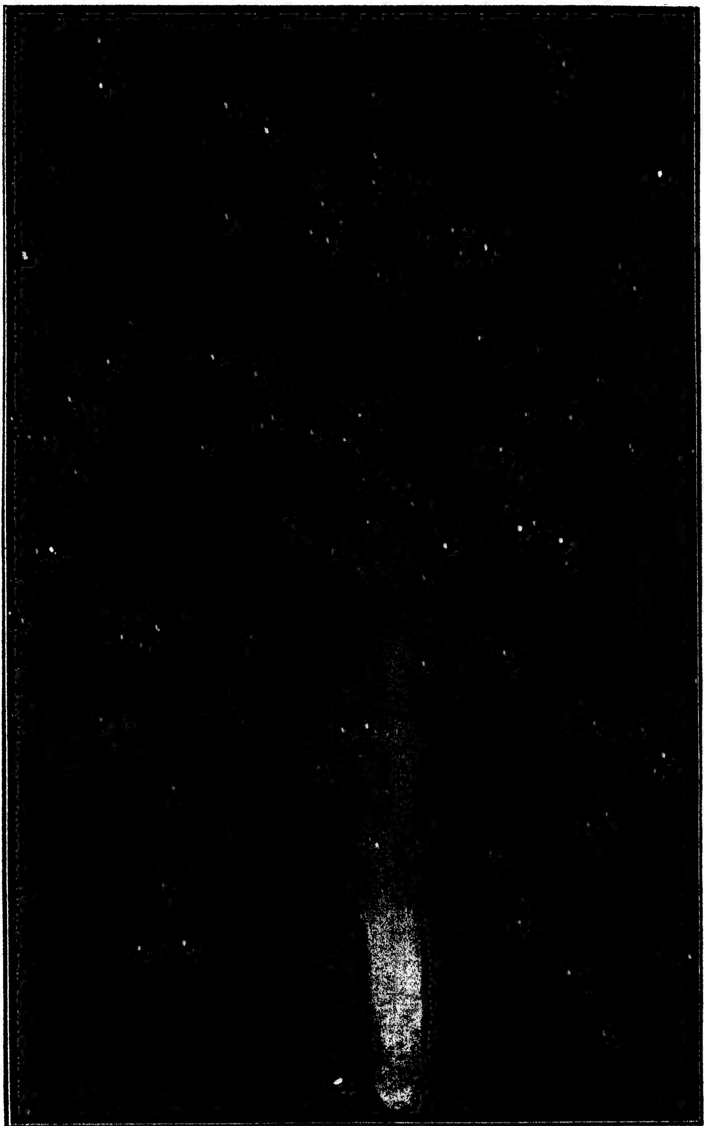
कुबेर का पता बहुत पहले ही लग जाता परन्तु १,५०,००,००० तारों में से ढूँढ कर कुबेर को पहचानना क्या साधारण काम था? उरण की चमक के बराबर तो केवल २००० तारे थे। वरुण को केवल २०,००० तारों में से ढूंढना पड़ा था, परन्तु कुबेर के प्रकाश के समान तो १,५०,००,००० तारे थे। इसके पूर्व आकाश प्रांत के अनेक फोटो लिये गये थे। इनमें कुबेर तो था पर किसी ने उसे पहचाना नहीं था। यह कुबेर सूर्य से ३,७०,००,००,००० मील की औसत दूरी पर रहता है। उसकी कक्षा का आकार वृत्त है जो अधिक लंबी है। कभी-कभी कुबेर सूर्य से २,७०,००,००,००० मील पर आ जाता है। कभी-कभी वह ४,६०,००,००,००० मील की दूरी पर चला जाता है। जब वह निकटतम दूरी पर रहता है तब उसका मार्ग वरुण की कक्षा के भीतर आ जाता है, परन्तु इन दोनों ग्रहों के टकराने का भय नहीं है। कुबेर के विषय में भी अभी हमारा ज्ञान अधिक नहीं, परन्तु कहते हैं कि उसका वर्ष पृथ्वी के २४९ वर्षों के बराबर होता है।

इस दूरस्त ग्रह से सूर्य शायद एक चमकदार तारे की तरह दिखाई पड़ता होगा।

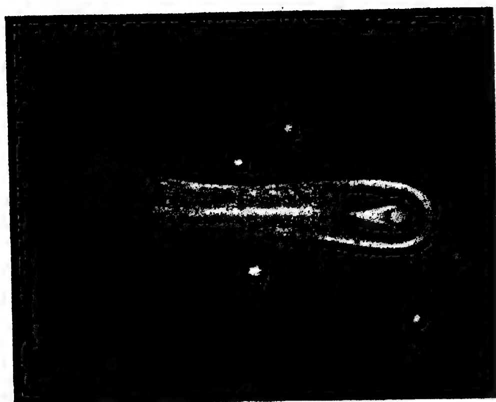
८--कुबेर का पिण्ड—ज्योतिषी लोग कहते हैं कि कुबेर का पिण्ड मंगल के बराबर होगा। शायद उसकी घनता अधिक होगी। सूर्य की गरमी का १/१६०० भाग शायद कुबेर को मिलता होगा। परन्तु कुबेर पर अंधेरा न होगा। अनुमान किया जाता है कि कुबेर की सतह पर ठंढक के कारण बर्फ ही बर्फ होगी। इसलिए उस पर इतना प्रकाश होता होगा जितना २०० पूर्णिमा के चाँदों से मिलकर हो सकता है। कहते हैं कि कुबेर पर शायद तापमान ज़ीरो या शून्य से ३८०° डिगरी नीचे रहता होगा। इसी कारण वहाँ की हवा भी जम गई होगी। इस विचित्र ग्रह पर दिन कितना बड़ा होता है, इसका पता अभी नहीं लग सका और न इसका पता चल सका कि इसकी सतह कैसी है। संभव है भविष्य से २०० इंच के व्यास वाली दूरबीन के बन जाने पर हम कुबेर के विषय में और बहुत सी विचित्र बातें जान सकें। अनुमान किया जाता है कि कुबेर का व्यास ८००० मील है—अर्थात् हमारी धरती के ही बराबर।

कुबेर के अतिरिक्त क्या कोई और भी सौरपरिवार का ग्रह अभी पता लगाने को है? संभव है हो। यह भविष्य में ज्योतिषियों की खोज पर निर्भर है।





हैली-केतु जो मई १९१० में दिखाई पड़ा था।　　　[सौरपरिवार



साधारण केतु के विभाग। १—नाभि जो तारे की तरह दिखाई पड़ती है। २—सिर जिसके बीच में नाभि होती है। ३—पूँछ

[सौरपरिवार

१०—केतु और उल्काएँ

१—अशुभ केतु—सौर-परिवार के ग्रहों और उप-ग्रहों का परिचय आप पा चुके। आप यह समझते होंगे कि सौर-ब्रह्माण्ड या सौर-जगत् में केवल नौ ग्रह हैं, उनके २६ उप-ग्रह वा चाँद हैं, और करीब दो हज़ार अवान्तर ग्रह हैं। नहीं, इतने ही से सौर-परिवार पूरा नहीं होता। सौर-परिवार के कुछ सदस्य ऐसे भी हैं जो बड़ी दूर-दूर की सैर करते रहते हैं और अपने समय पर सूर्य की प्रदाक्षिणा करने आते हैं। ये सैर करनेवाले सदस्य केतु या पुछल तारे हैं। सूर्य के स्थायी ग्रहों और उप-ग्रहों को हम बराबर देखते रहते हैं इसलिए पुच्छल तारे, जो कभी-कभी ही दिखाई पड़ते हैं, मनुष्यों को भयभीत कर देते हैं। केतु वा पुच्छल तारों को लोग बहुत दिनों बाद देखते हैं इस लिए समझते हैं कि कोई भयानक बात होने वाली है। हमारे प्राचीन साहित्य में भी 'केतु' बहुत अपशकुन

माना गया है। अभी तक जनता में अंध विश्वास वर्तमान है कि जब पुच्छल तारा दिखाई पड़ता है तब दैवी विपत्ति आती है। भारतवर्ष में सन् १९१० में पुच्छल तारा दिखाई पड़ा तब लोग बहुत घबड़ाए। परन्तु पुच्छल तारों से इन घटनाओं से कोई स्पष्ट संबंध नहीं है। केतु वा पुच्छल तारे भी आकाशीय पिण्डों की तरह नियमानुकूल आचरण करते हैं। ज्योतिष विज्ञान उनके विषय में बहुत कुछ जान सका है।

२--**केतु क्या हैं ?**—पहले यह समझ लीजिए कि केतु हैं क्या हैं ? जिसने १९१० का पुच्छल तारा देखा होगा उसे तो बतलाने की ज़रूरत नहीं कि यह आकाश में झाड़ू की तरह उगता है। साधारण तौर से समझना चाहिए कि पुच्छल तारे में एक तो सिर या Coma होता है जिसके बीच नाभि (Nucleus) होती हैं। दूसरे उसकी लंबी दुम या Tail होती है। नाभि तो चमकदार होती हैउसे घेरे हुए सिर होता है। इसी से लगी हुई दुम दूर तक फैली रहती है। कभी-कभी नाभि नीहारिका के आकार की होती है। सिर (जिसे Head या Coma भी कहते हैं) केतु का मुख्य भाग होता है। इसका आकार धुंधली नीहारिका-सा होता है। ज्यों-ज्यों यह सूर्य के निकट पहुँता है इसका आकार बड़ा होता जाता है।

कहते हैं कि केतु छोटे-बड़े सभी तरह के होते हैं। सन् १८११ में जो महान केतु दिखलाई पड़ा था उसके सिर का व्यास दस लाख मील था यानी वह सूर्य से भी बड़ा था। अधिकतर के सिर प्रायः

८०,००० मील तक के देख गये हैं। छोटे-छोटे केतु कम दिखाई पड़ते हैं। इन केतुओं की नाभि में बहुत से छोटे-छोटे उल्का-प्रस्तर (Meteorites) होते हैं। उनके चारों ओर हलकी गैस घेरे रहती है। केतु जब सूर्य से दूर रहते हैं तब उनकी दुम नहीं रहती परन्तु जैसे-जैसे वे सूर्य के निकट आते जाते हैं उनकी दुम बननी आरंभ हो जाती है। कहते हैं कि इसका कारण यह है कि कोमा या सिर से गैस के परमाणु सूर्य से दूर भागने लगते हैं और वे इस लिए नाभि से मिले हुए सूर्य की विपरीत दिशा में फैल जाते हैं। यही सूर्य के प्रकाश में लंबी दुम का आकार ग्रहण करते हैं।

दुम की लंबाई का अनुमान किया गया है। कहते हैं कभी-कभी यह पूँछ बीस करोड़ मील तक होती है। इतनी लम्बाई-चौड़ाई के होने पर भी केतु का द्रव्यमान (Mass) या वज़न बहुत कम होता है। समस्त केतुओं का यदि सारा द्रव्य एकत्र किया जाय तो इतना भी न हो सकेगा कि एक चन्द्रमा के बराबर पिण्ड बन सके। इससे स्पष्ट है कि केतु के भीतर के पदार्थ बहुत छोटे-छोटे होते हैं। उनमें हल्की-से-हल्की गैस रहती है।

३—केतु की बनावट—केतु की परीक्षा रश्मिविश्लेषक यंत्र से की गयी तो इसमें दो भयानक गैसों की उपस्थिति देखी गई। इन्हें अंग्रेजी में—किनोजन (Cyanogen) और कार्बन एकौषिद् (Caron Monoxide) कहते हैं। सन् १९१० में जो केतु देखा गया था (जिसे 'हैली का केतु' कहते हैं)

उसमें ये दोनों गैस देखे गये थे। उस समय जब यह पता लगा कि यह केतु पृथ्वी से टकरायेगा तो लोग बड़े चिंतित हुए कि कहीं उस केतु के ज़हरीले गैस से पृथ्वी के प्राणी मर न जाँय। परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। बात यह थी कि

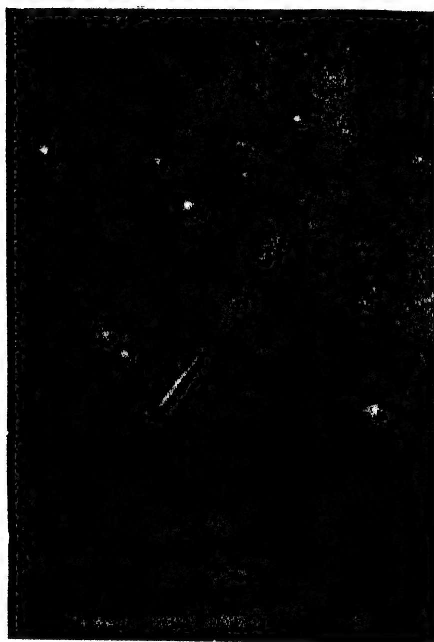


१८८२ का केतु जो दिन में दिखाई पड़ा था। [सौरपरिवार

केतु में ये गैस इतनी विरेली दशा ने थी कि यदि पृथ्वी उसके बीच में पैठ जाती तो भी मनुष्य नहीं मरते। हाँ, यदि कहीं पृथ्वी केतु की नाभि से टकरा जाती तो कहीं कुछ होता—सो भी क्या—एक अत्यन्त चमकदार उल्का कड़ी दिखाई पड़ती

अथवा दो एक बड़े उल्का-प्रस्तरों का आघात संभवतः पृथ्वी को सहना पड़ता।

पुच्छल तारों में कुछ तो इतने चमकीले देखे गये हैं कि दिन में ही वे दिखाई पड़े हैं। परन्तु विचित्र बात यह है कि



हैली-केतु जो सन् १९१० में दिखाई पड़ा था। [सौरपरिवार

चमकदार होते हुए भी ये पारदर्शक होते हैं। इसकी आड़ में यदि कोई तारा पड़ जाता है तो वह भी दिखाई पड़ता रहता है। पहले जब दूरबीन नहीं थी तब छोटे-छोटे केतु नहीं देखे

जा सकते थे, परन्तु अब तो ९०० से ऊपर केतु देख जा चुके हैं। पुच्छल ताराओं की कक्षा बहुत लंबी वृत्त के आकार की होती है। जैसे-जैसे केतु सूर्य के निकट पहुँचता है उसकी गति तीव्र होती जाती है। ज्यों-ज्यों वह दूर होता जाता है उसकी गति



हैली [सौरपरिवार

मंद पड़ती जाती है। सन् १९१० में जो हैली-केतु देखा गया था उसके विषय में हिसाब लगा कर हैली ने ही भविष्यवाणी की थी। इस हैली-केतु की पूरी प्रदक्षिणा ७५ वर्षों में पूरी होती है। यह हमें फिर १९८५ में दिखाई पड़ेगा।

४—उल्काएँ—आपने आकाश में तारे टूटते अकसर देखा होगा। इसी को उल्का कहते हैं। उल्का का अर्थ है मशाल या जलती हुई लकड़ी इन्हें अंग्रेजी में Meteors या Shooting stars कहते हैं। उल्काएँ कई प्रकार की देखी जाती हैं। कुछ छोटी होती है कुछ बहुत चमकीली, जिनके कारण कभी-कभी आकाश



[सौरपरिवार

उल्का प्रस्तर

में काफ़ी रोशनी देखाई पड़ जाती है। अकसर बड़ी उल्काओं के गिरने के समय सरसराहट और कभी-कभी हल्की सीटी की तरह आवाज़ भी सुनाई पड़ती है। इनके छूटने का दृश्य उसी तरह लगता है जैसे आसमान में 'हवाई' या बान छोड़ने पर होता है। अधिकतर उल्काएँ तो आसमान में ही चमककर बुझ जाती हैं। परन्तु कभी-कभी उनके टुकड़े पृथ्वी पर समूचे

आ गिरते हैं। ऐसे टुकड़ों को उल्का-प्रस्तर या Meteorite कहते हैं। प्रश्न होता है ये उल्काएँ क्या हैं ? इनसे हमें क्या मालूम हो सकता है ?

५–उल्काएँ क्या हैं ?—उल्काएँ क्या हैं ? इस पर बहुत दिनों से लोग सोचते आये हैं। पहले लोग समझते थे कि जब तारे टूटते हैं तब हमें उल्काओं का प्रकाश दिखाई पड़ता है। बहुत लोग इन्हें देखकर विपत्ति की आशंका करने लगते हैं। इन्हें अशुभ लक्षण समझने की प्रवृत्ति बहुत प्राचीन काल ही से मनुष्य में रही है। यह सब केवल अज्ञान वश होता है। उल्काओं से हमें कोई भय नहीं होना चाहिए—हाँ, यदि डरने की वस्तु हैं तो उल्का-प्रस्तर क्योंकि यदि ये बड़े-बड़े आकार के हमारी पृथ्वी पर आ गिरें तो अवश्य उनसे बहुत हानि हो सकती है। उल्काओं के विषय में ज्योतिषी लोग कहते हैं कि आकाश के विस्तृत शून्य प्रदेश में न जाने कितने छोटे-मोटे पिण्ड भ्रमण किया करते हैं, इनमें बहुतों का आकार छोटे-छोटे प्रस्तर के टुकड़ों से बड़ा नहीं होता है। ये पिण्ड जब कभी पृथ्वी के वायुमण्डल से टकराते हैं तब भीषण संघर्ष के कारण वे जल उठते हैं और उनका प्रकाश हमें दिखाई पड़ता है। पहले लोग समझते थे कि ये उल्काएँ पृथ्वी के बहुत निकट ही रहती हैं परन्तु अब परीक्षा करके यह सिद्ध हुआ है कि इन उल्काओं की ऊँचाई कम-से-कम ५० मील ऊपर होता है। कभी-कभी तो इनका गिरना १०० मील तक ऊँचे से आरंभ

होता है। उल्काओं की गति बड़ी तेज़ होती है। कभी-कभी



मेरूआ (भारत) में गिरा हुआ एक उल्का-प्रस्तर [सौरपरिवार

इनकी गति प्रति सेकेण्ड १०० मील से अधिक देखी गई है। कहते हैं कि प्रति दिन १,००,००,००० उल्काएँ पृथ्वी के वायुमण्डल

में प्रवेश करती रहती हैं। उनमें से केवल १ प्रतिशत् ही हमें प्रकाश रूप में दिखाई पड़ती हैं। इन उल्काओं के कारण प्रतिवर्ष पृथ्वी का वज़न १,००,००० टन के हिसाब से बढ़ रहा है। सूर्य में तो प्रति सेकेण्ड २००० टन वज़न की उल्काएँ गिरती रहती हैं! परन्तु हमारी पृथ्वी को उससे विशेष हानि नहीं होगी क्योंकि



[सौरपरिवार

लूआ (भारत) में गिरा हुआ एक उल्का-प्रस्तर

इनसे पृथ्वी की सतह को केवल १ इंच मोटी होने में करोड़ों वर्ष लग जायँगे!

६—उल्का-प्रस्तर—जब कभी उल्का आकार में बड़ी

होती है और उसकी चाल धीमी होती है तब वह पृथ्वी के वायुमण्डल में पड़कर बिना जले ही धीरे-धीरे पृथ्वी पर गिरती है—उसे उल्का-प्रस्तर Meteorite या Aerolite कहते हैं। इन प्रस्तरों का आकार छोटा-बड़ा सभी तरह का होता है।



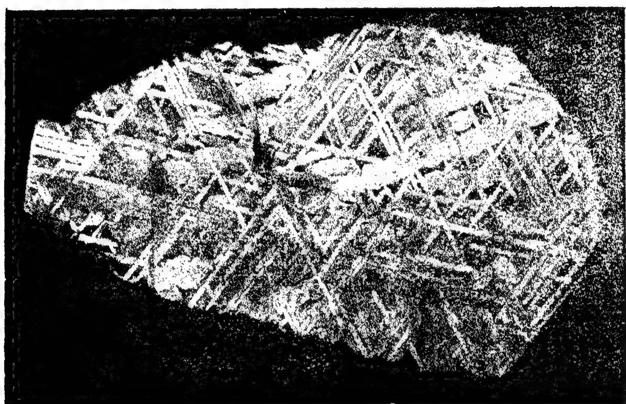
उल्का-प्रस्तर [सौरपरिवार

सन् १८३८ में हंगरी के डिवीना नामक एक स्थान में १२ सेर का एक उल्का-प्रस्तर गिरा था। सन् १९०८ में रूस के साइबेरिया प्रान्त में एक उल्का-प्रस्तर इतना बड़ा गिरा था कि उसके कारण १००० वर्ग मील के पेड़-पौधे भस्म हो गये थे। संयोग

से इस प्रदेश में मनुष्यों की आबादी न थी। उस उल्का-प्रस्तर के गिरने का प्रकाश तो बहुत लोगों ने दूर-दूर से देखा पर किसी को यह पता न चला कि यह किस स्थान पर गिरा है। बहुत दिनों के बाद सन् १९२७ में कुलिक (Kulik) नामक एक व्यक्ति ने इस स्थान को खोज निकाला। अमेरिका में ऐरिज़ोना (Arizona) प्रांत में एक स्थान पर ४२०० फुट व्यास का एक गड्ढा है जो उल्कापात के कारण हो गया है। यह गड्ढा ५७० फुट गहरा है। इसके आस-पास उल्का-प्रस्तर पाये गये हैं। लोगों का कहना है कि असली उल्का-प्रस्तर तो इतनी तेज़ी से गिरा होगा कि उसका टुकड़ा पृथ्वी में घुस गया होगा। इस घटना को घटे हजारों वर्ष हुए होंगे, क्योंकि उस गड्ढे के किनारे के वृक्ष ७०० वर्षों से ऊपर आयु के आँके गये हैं। अस्ट्रेलिया में भी इस तरह के कई गड्ढे पाये जाते हैं जिनके विषय में अनुमान है कि ये उल्का-पात के कारण बने हैं।

७—उल्का-प्रस्तर की बनावट—उल्का-प्रस्तरों की जाँच की गयी तो पता चला कि इनमें प्रायः दो तरह के पत्थर हैं। एक में लोहा रहता है जिसे Siderites कहते हैं। दूसरे पत्थर के होते हैं जिन्हें Aerolites कहते हैं। किसी-किसी में लोहा और पत्थर दोनों पाये गये हैं। इन उल्का-प्रस्तरों के नमूने प्रायः सभी बड़े-बड़े अजायब घरों में रखे हुए हैं। रसा-यन शास्त्र के पंडितों ने परीक्षा करके देखा तो इन उल्का-प्रस्तरों में प्रायः वे ही मूलतत्व पाये गये जो हमारी पृथ्वी के पदार्थों

में मिलते हैं। इससे यह पता चलता है कि हमारी पृथ्वी के अतिरिक्त जो आकाशीय पिण्ड शून्य में वर्तमान हैं उनकी बनावट भी हमारी धरती ही सी होगी। अभी तक विश्व के समस्त मूलतत्वों की गिनती [illegible] तक पहुँची है। उल्का-प्रस्तरों को गरम करने पर उनमें से गैस निकलती है जिसका तेज़ी के कारण वायु-



[सौरपरिवार

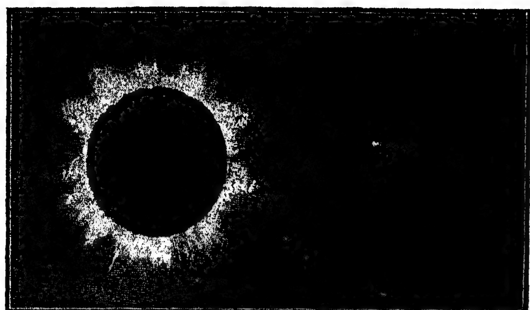
तेज़ाब में डालने पर उल्का-प्रस्तर

मण्डल की रगड़ से जल उठना प्रमाणित होता है। उल्का-प्रस्तरों के रसायनिक विश्लेषण से २७ तत्व (Element) पाये गये हैं।

८--उल्काओं की कक्षा—अधिकतर उल्काएँ स्वतंत्र रूप से शून्य आकाश में विचरती रहती हैं परन्तु ज्योतिषियों का अनुमान हो रहा है कि इनमें कुछ का संबंध हमारे सौर-ब्रह्माण्ड

से है। हाँ, यह मानना पड़ेगा कि इनमें अधिकतर ऐसी हैं जिन्हें हम विश्व की रचना के बाद बचा-खुचा कंकड़-पत्थर-मसाला कह सकते हैं। कुछ उल्काएँ वर्ष के एक नियमित समय पर एक विशेष स्थान पर देखी गयी हैं जिससे लोगों का कहना है कि ये उल्काएँ भी किसी निश्चित कक्षा वा मार्ग में चलती हैं। गणना करने से पता चला है कि इनकी कक्षा और प्रसिद्ध केतुओं की कक्षा में बहुत कुछ साम्य है। उल्काएँ प्रायः झुण्ड में भ्रमण करती हैं। कभी-कभी एक ही स्थान में उल्का-प्रस्तरों की वर्षा देखी गयी है। एक बार फ्राँस के एक स्थान में तीन हज़ार ऐसे पत्थर गिरे। पोलैण्ड के एक स्थान में एक बार एक लाख छोटे-छोटे उल्का-प्रस्तर गिरे थे। भारतवर्ष में भी इस प्रकार के उल्का-प्रस्तर गिरे हैं। एक बार हमारे यू० पी० प्रान्त के जालौन ज़िले में एक बड़ा उल्का-प्रस्तर गिरा जिसका वजन ५० मन के करीब था। इसके गिरने से दिन में ही दो आदमी मर गये थे।



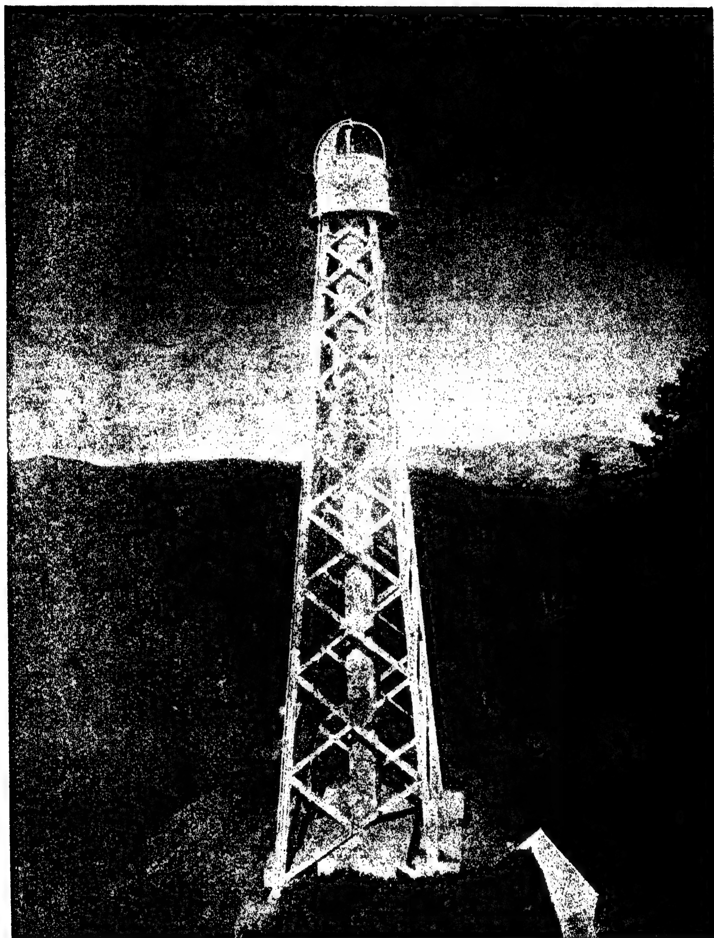


[सौरपरिवार

कभी-कभी सर्व सूर्यग्रहण के अवसर पर केतु दिखाई पड़े हैं।

११–आकाश की सैर

१–आकाश के गर्भ में—प्रिय पाठक गण ! आपने सौर-परिवार के सदस्यों का हाल तो सुन लिया। अब ज़रा आकाश के अन्य वासियों का हाल सुन लीजिए। आप के देखने में आकाश में कितने तारे होंगे ? क्या आप इनकी गिनती कर सकते हैं ? साधारणत: आँखों से किसी समय हम केवल दो हज़ार तारे देख सकते हैं। सन् १९३८ में ३५ वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद अमेरिका के दो पिता-पुत्र ज्योतिषियों ने इन तारों की सूची बनाई। इनका नाम था—लिविस बास (Lewis Boss) और बेंजमीन (Benjamin) इनकी सूची के अनुसार पृथ्वी पर से कोरी आँखों को दिखाई पड़नेवाले तारों की संख्या दस हज़ार से कम थी। छोटे-मोटे दूरबीन से यदि देखा



[सौरपरिवार

माउन्ट विल्सन की वेधशाला के दूरदर्शक की अट्टालिका। यह १५० फुट ऊँची है।

जाय तो ३३,३४२ तारे दिखाई पड़े हैं। परन्तु इतने से तारों की गिनती पूरी नहीं होती। अमेरिका के माउन्ट विल्सन की वेधशाला की दूरबीन से देखने पर आकाश में १,५०,००,००,००० तारे दिखाई पड़े। परन्तु अब भी लोगों का अनुमान है कि इस आकाश गंगावाले विश्व में कम-से-कम ३,००,००,००,००,००० तारे होंगे। संपूर्ण आकाश में कितने तारे होंगे? सर जेम्स जीन्स का अनुमान है कि संपूर्ण विश्व के तारों की यदि कोई गिनती करने लगे और १,५०० तारे प्रति मिनट गिने तो उसे पूरे ७०० वर्ष लग जायँगे! ये प्रत्येक तारे सूर्य हैं। इस आधार पर ज्योतिषी लोगों का कहना है कि समस्त आकाश-मण्डल का व्यास कम-से-कम ६,००,००,००,००० प्रकाश वर्ष होगा!

२—तारों की दूरी—पिछले अध्याय में आप ने देख लिया कि सौर-जगत् का व्यास कुबेर की कक्षा का व्यास है—अर्थात् करीब ७,८०,००,००,००० मील। परन्तु हमारे सौर-मण्डल से निकटतम् तारा मूल नक्षत्र का अल्फा-सेंटारी (Alfa Centauri) ८ नील १० खरब मील हैं। स्वाति नक्षत्र १४$\frac{१}{२}$ नील मील है। अभिजित नक्षत्र २३$\frac{१}{४}$ नील मील है। इतनी दूरी का अन्दाज़ आप को नहीं लगता होगा, इसलिए यों समझिए कि सब से निकट तारे का प्रकाश हमें ४$\frac{३}{३}$ वर्षों में पहुँचता है और आप जानते हैं कि प्रकाश एक वर्ष में ५८,८०,००,००,००,००० मील चलता है।

यह तो हुई हमारे निकटतम तारे की बात, परन्तु जो सब से अधिक दूर हैं उनके प्रकाश-किरण को हम तक पहुँचने में हज़ारों वर्ष लगते हैं। एड्रोमीडा (Andromeda) नीहारिका हम से अत्यन्त दूर है। इसके प्रकाश को हम तक पहुँचने में ९,००,००० वर्ष लगते हैं।

आकाश में जो डहर या आकाश-गंगा आप देखते हैं उसके विषय में कहा जाता है कि वह हमारे सौर-ब्रह्मण्ड को घेरे हुए है—अर्थात् हमारा सूर्य उसके बीच में है। परन्तु अब पता चला है कि इस आकाश-गंगा वाले ब्रह्माण्ड का केन्द्र हमारे सूर्य से २,००,००,००० से ५,००,००,००० प्रकाश वर्ष दूर होगा।

३–तारों का प्रकाश—आप ने सूर्य के पिण्ड की विशालता को देख लिया है। अब ज़रा इन दूरस्त तारों की दशा सुनिये! इन तारों में कितने ऐसे हैं जिनका प्रकाश हमारे सूर्य से बहुत ज़्यादा है। उनमें कुछ हमारे सूर्य से सैकड़ों गुना प्रकाश में बड़े हैं। यदि सूर्य और तारे सब एक ही दूरी पर लाये जा सकते तो हम देखेंगे कि कुछ तारे हमारे सूर्य से करोड़ों गुना अधिक चमकीले हैं और कुछ इतने कम चमकीले हैं कि हमें वे मुशकिल से दिखाई पड़ते हैं। S. Doradus नामक तारे का प्रकाश हमारे सूर्य से ५,००,००० गुना अधिक है। यदि सूर्य कहीं इतने प्रकाश से चमक उठे तो हमारी धरती ताप से धुएँ के रूप में उड़ जाय! कुबेर, जो सूर्य से बहुत दूर है, उसका भी पिण्ड गरमी से लाल हो उठेगा! इसके विपरीत कुछ ऐसे मंद



[सौरपरिवार

एड्रोमीडा नीहारिका । यही पृथ्वी से ९,००,०००प्रकाश वर्ष दूर है । यह नीहारिका एक विश्व है । इसमें करोड़ों तारे होंगे

तारे भी आकाश में देखे गये हैं जिनकी १०,००० संख्या एकत्र की जाय तो कहीं हमारे सूर्य की तरह रोशनी हो सकेगी !

४–तारों का तापमान—आप जानते हैं तारों का प्रकाश उनके पिण्ड के आकार और तापमान के अनुसार होता है। जो गरम पिण्डवाले तारे हैं उनसे काफ़ी प्रकाश निकलता है। परन्तु बहुत से तारे अपेक्षाकृत बहुत ठंढे हैं। तारों का तापमान कई प्रकार से जाँचा गया है। इनके वर्ण विभिन्न होते हैं। इनमें जो मंद लाल रंग के हैं वे अपेक्षाकृत ठंढे होते हैं। जो पीले हैं वे कुछ अधिक गरम होते हैं। जो बहुत उज्ज्वल प्रकाश देते हैं वे अति तप्त होते हैं। जिनका प्रकाश नीलापन लिये हुए रहता है वे उससे भी अधिक गर्म माने गये हैं। पीले तारों की जाँच की गयी तो पता चला कि उस तारे में सूर्य की तरह धातु अधिक हैं जैसे—लोहा कैलसियम, आदि। सफ़ेद तारों में हाइड्रोजन और हीलिवम् गैस होता है। इस तरह तारों के प्रकाश की जाँच रश्मिविश्लेषक यंत्र की सहायता से करके उनके तापमान का पता उन तारों के वर्ण से लगाया जाता है। तब निश्चय होता है कि उनकी क्या अवस्था है—वे बूढ़े वा जवान हैं।

५–तारों की अवस्था—आप पूछेंगे कि तारों में जवान बूढ़े का क्या सवाल ? बात यह है कि संसार की प्रायः सभी वस्तुओं में कुछ-न-कुछ परिवर्तन होता ही है, इसलिए इन तारों की भी अवस्था बदलती रहती है। आप को मालूम है

कि हमारा सूर्य धीरे-धीरे ठंढा हो रहा है और एक दिन यह बिल्कुल प्रकाशहीन हो जायगा। अरबों वर्ष बाद यह आज से अधिक मंद हो जायगा। इसी प्रकार यह अनुमान किया जाता है कि आज से बहुत काल पूर्व हमारा सूर्य आज के सूर्य से अधिक चमकदार, तप्त और बड़ा रहा होगा। इस तरह यह निश्चय होता है कि प्रकाश की कमी-बेशी ही इन तारों की अवस्था का परिचय देती है। ज्योतिषी लोग इस प्रकार तारों की भिन्न-भिन्न दशाएँ देखकर (विशेष कर उनका वर्णपट देखकर) उनके क्रमिक विकास का अनुमान करते हैं। कभी-कभी उन्हें धोखा भी हो जाता है। बहुत से ऐसे भी तारे हैं जिनका रूप, हमें भ्रम में डाल देता है। कृत्तिका नाम का तारा-पुंज आप आकाश में देख सकते हैं। उसे हम लोग बोल-चाल में 'कचपचिया' भी कहते हैं। उनका प्रकाश साफ़ नहीं है। यों देखने में यह तारापुंज सा लगता है जिसमें ६ तारे दिखाई पड़ते हैं। दूरबीन से देखने पर ये वाष्प के बादलों से लिपटे हैं और इनमें तारों की संख्या पचीसों तक है। इनके सफ़ेद प्रकाश को देखकर पहले समझा गया था कि ये नीहारिकाएँ वा नये तारे हैं। परन्तु पीछे पता चला कि नहीं, निहारिकाओं के वाष्प पदार्थ शून्य आकाश में फैले रहते हैं और केवल अत्यन्त तप्त तारों के ही कारण वे प्रकाशमान होते हैं। इस प्रकार अब लोग 'नव-जात' तारे उन्हीं को मानते हैं जिनमें वाष्प काफ़ी घनीभूत नहीं हुआ रहता। इनका आकार बड़ा

होता है। इसीलिए इनको दैत्य तारे (Giant stars) कहते हैं। इस श्रेणी के दो तारे Betelgeuse और Antarus सूर्य के व्यास के क्रमशः ३०० और ४०० गुना बड़े हैं। जैसे-जैसे तारे सिकुड़ते हैं उनका तापमान बढ़ता जाता है, उनका पिण्ड छोटा होता है।

६–नये तारे—नये तारे बहुत अधिक प्रकाश देते हैं। Betelgeuse का प्रकाश सूर्य से ५,००० गुना अधिक आँका गया है। परन्तु तारों का तापमान बराबर नहीं बढ़ता। जब वे इतने गरम हो जाते हैं कि उनका रंग सफ़ेद या कुछ नीलापन लिये सफ़ेद हो जाता है तब तापमान महत्तम रहता है। इसके बाद उनके सिकुड़ने मे ताप में वृद्धि नहीं होती और वे धीरे-धीरे विवर्ण होने लगते हैं और उनका प्रकाश घटते-घटते मंद लाल हो जाता है। साथ ही, सिकुड़ने के कारण वे बहुत छोटे भी हो जाते हैं। इस अवस्था वाले तारों को बौने तारे (Dwarf stars) कहते हैं। परन्तु इधर एक नया मत भी उपस्थित किया जा रहा है। इसके अनुसार जब तारे बुझने के समीप आते हैं तब कुछ तारों में नवीन स्फूर्ति दिखाई पड़ने लगती हैं—यह 'कायाकल्प' नहीं तो वृद्धावस्था के लक्षण हो सकते हैं। आकाश में कितने बौने तारे (Dwarf stars) देखे जा रहे हैं जिनका प्रकाश सफ़ेद हो गया है यद्यपि वे पृथ्वी से छोटे हैं परन्तु उनका घनत्व इतना अधिक है कि एक चम्मच भर पदार्थ तौल में २$\frac{1}{4}$ मन ठहरेगा! कहते हैं कि वे पृथ्वी की अपेक्षा ५०,००० गुना भारी हैं—और सम्भव है उनके

भीतर का घनत्व १०,००,००० गुना हो !! इस तरह उनके पिण्ड का एक छोटे गेंद के बराबर का भाग तौल में हज़ार मन से कम न होगा। इससे हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि ज्यों-ज्यों तारे विकसित होते हैं उनका आयतन (Volume) कम होने लगता है। परन्तु उनका प्रकाश बढ़ने लगता है इसी के साथ-साथ उनका घनत्व बढ़ने लगता है और वे अधिक ठोस होने लगते हैं। पीछे, जब वे बूढ़े होने लगते हैं तो उनका प्रकाश घटने लगता है, परन्तु घनत्व बराबर बढ़ता ही जाता है।

७–तारों के भेद—अकसर आकाश में दोहरे तारे (Double Stars) देखे गये हैं। ये दो तारे साथ-साथ रहते हैं और एक दूसरे के चारों ओर घूमते रहते हैं। कहते हैं कि सम्भवतः कभी ये एक ही रहे हों और किसी कारण उनके पिण्ड के दो टुकड़े हो गये हों। कुछ तारे हमें झुण्ड में दिखाई पड़ते हैं। इन्हें 'तारा-पुंज' कहते हैं, जैसे कृत्तिका। कुछ तारों का प्रकाश 'अस्थिर' रहता है। इन्हें Variable Stars कहते हैं। ये कभी बहुत मंद, कभी बहुत तेज़ चमक देते हैं। इनमें भी कुछ का प्रकाश बहुत कम समय में घटता-बढ़ता रहता है, कुछ का काफ़ी समय में होता है। कहा जाता है कि बहुत से तारों के इस अद्भुत आचरण का कारण यह है कि वे सिकुड़ते-बढ़ते रहते हैं जिसके कारण उनका प्रकाश घटता-बढ़ता रहता है।

कभी-कभी एकाएक आकाश में कोई चमकदार तारा दिखाई पड़ने लगता है। लोग समझते हैं कोई नया तारा उत्पन्न हो

गया, पर ऐसा नहीं है। इसका कारण यह माना गया है कि आकाश में कोई अत्यन्त मन्द प्रकाश का तारा, जो पहले दिखाई नहीं देता था, एकाकक बहुत तेज़ प्रकाश देने लगा जिसके कारण हम लोगों का ध्यान उधर गया। उन तारों को Novae कहते हैं। इस तरह का एक तारा १५७२ में देखा गया था। सन् १९१८ में भी एक ऐसा ही देखा गया। ऐसा क्यों होता है कि एकाएक प्रकाश बढ़ जाय? कहते हैं कि ये तारे एकाएक फट जाते हैं और दूरबीन से देखने पर कुछ Novae के चारों ओर मेखला वा वलय-सा देखा गया। यह वलय बाष्प-सी वस्तु का था, जिसका रंग नीलापन लिये था। पता चलता है कि बहुत गरम बाष्प के कारण ऐसा हुआ था।

८—तारे सूर्य हैं—आसमान में जो तारे हमें दिखाई पड़ते हैं उनमें प्रायः सभी हमारे सूर्य की तरह ही सूर्य हैं। अनेक का आकार हमारे सूर्य से कई गुना बड़ा है। ये सभी तारे हमारे देखने में अचल हैं परन्तु 'अचल' कोई भी नहीं होता। कितने तो ६०,००,००,००० मील प्रतिवर्ष के हिसाब से चल रहे हैं। वे इतनी दूर हैं कि हमारे देखने में वे गतिरहित दीखते हैं—परन्तु लाखों वर्ष बाद यदि हम इन्हें देख सकें तो उनके स्थान बदले हुए दिखाई पड़ेंगे। हमारा सूर्य २०० मील प्रति सेकेण्ड की गति से चल रहा है। कहते हैं कि सूर्य अपनी महान कक्षा पर २५,००,००,००० वर्ष में एक बार घूम जाता है।

९—नीहारिका—अधिकतर आकाश शून्य है। यदि ऐसा न होता तो हम बहुत दूर तक नहीं देख पाते। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि इस विस्तृत शून्य प्रदेश में सर्वत्र खाली है। नहीं, उसमें हमें तारे दिखाई पड़ते हैं। कहीं-कहीं हमें उसके सुदूर प्रान्तों में वाष्प



(१) नीहारिका



(२) नीहारिका



(३) नीहारिका

के मेघ-मण्डल दिखाई पड़ते हैं, जिन्हें नीहारिका (Nebulae) कहते हैं। अधिकांश नीहारिकाएँ प्रकाशमय हैं, परन्तु कुछ काली नीहारिकाएँ भी हैं जो हमें तभी दिखाई पड़ती हैं जब उनके पीछे कोई प्रकाशमय तारा रहता है। उदाहरणतः यदि आप 'आकाश·

गंगा' को देखें तो उसमें काले धब्बे दिखाई पड़ते हैं। ये काले परदे-से क्या हैं ? कहते हैं कि ये भी गैस के बादल हैं जिनके भीतर प्रकाश न होने के कारण हम कुछ नहीं देख पाते। यदि काली नीहारिका के पास कोई प्रकाशमय तारा हो तो वे हमें चमकीले बादल की तरह दिखाई पड़ें जैसे कृत्तिका की नीहारिका। किसी-किसी नीहारिका में प्रकाश भी है और बीच-बीच में काले धब्बे भी हैं। नीहारिका कई प्रकार की देखी गई हैं। काली नीहारिका की चर्चा ऊपर की गई है। एक को तो आप दक्षिणी आकाश-गंगा में देख सकते हैं जिसे अंगरेज़ी में Coalsack कहते हैं। (२) 'ओरियन नेबुला' (Orion Nebula) में गैस पदार्थ प्रकाशमय हैं। यह हम से १२०० प्रकाशवर्ष दूर है। (३) 'तंतुमय नीहारिका' में आपको प्रकाश के तंतु दिखाई पड़ेंगे। इसे Fila-mentous Nebula कहते हैं। (४) 'विस्तृत' नीहारिका' (Diffused Nebula)—ये गैस और छोटे परमाणुओं, से भरी रहती हैं। इनमें बीच-बीच में काले धब्बे भी रहते हैं। ये प्रायः आकाश-गंगा में ही होते हैं। (५) 'कुण्डली नीहारिका'—जिनका आकार पहिये की तरह होता है। (६) Magellanic cloud यह चमकदार बादल-सा दिखाई पड़ता है।

इन नीहारिकाओं में प्रत्येक उसी प्रकार के विश्व हैं जैसे आकाश गंगा से घिरा हुआ हमारा विश्व जिसमें अनेक ब्रह्मांड हैं। उनमें हमारा सौर-ब्रह्माण्ड एक है।

१०--**नीहारिका की दूरी, गति आदि**—नीहारिकाएँ



काली नीहारिका [सौरपरिवार

हमसे कितनी दूर हैं ? यह प्रश्न उठता है। कहते हैं कि इनमें कितनी तो इतनी दूर हैं कि उनके प्रकाश को हमारी धरती तक पहुँचने में १०,००,००० वर्ष लगते हैं, अर्थात् इनका प्रकाश उस समय वहाँ से चला होगा जब हमारी धरती पर शायद जीव की उत्पत्ति भी न हुई होगी ! इनकी गति का हाल तो यह है कि इनमें से कुछ ५०,००० मील प्रति सेकेण्ड के हिसाब से हमसे दूर भागी जा रही हैं। ऐसी तीव्र गति की नीहारिकाएँ हमसे ५०,००,००,००० प्रकाशवर्ष दूर हैं।

११--**अनंत आकाश**—आपने आकाशीय पिण्डों का दिग्दर्शन कर लिया। अब आपको विश्वास हो गया होगा कि इस अनंत आकाश की थाह नहीं लगाई जा सकती। इसमें हमारा सौर-ब्राह्माण्ड तो कुछ भी नहीं जान पड़ता। इस आकाश रूपी अथाह-समुद्र में ये अनेक विश्व छोटे-छोटे द्वीप की तरह हैं। जिनमें अनेक ब्रह्माण्ड हैं जिनकी गिनती नहीं हो सकती। इस आकाश का न कहीं कोई केन्द्र है, न आदि, न अंत ! परन्तु डाक्टर हुब्बुल (Dr. E. P. Hubble) का अनुमान है कि आकाश की गहराई ६,००,००,००,००० प्रकाश वर्ष से अधिक नहीं होगी। इसके आगे शून्य आकाश भी न होगा !



१२—ज्योतिष और उसके सहायक यंत्र

१—ज्योतिष—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उपग्रह, उल्का, केतु, नीहारिका आदि का परिचय आपने प्राप्त कर लिया। विश्व की उत्पत्ति और विकास का क्रम आपने समझ लिया। इस अनंत आकाश में विचरनेवाले असंख्य पिण्डों की अद्भुत झाँकी भी आपने देख ली। अब आप तनिक उस विद्या की भी कहानी सुन लें जिसकी सहायता से हमें इन दूरस्थ आकाशीय पिण्डों के रहस्य का पता चलता है।

२—ज्योतिष शास्त्र का विकास—इसविद्या को ज्योतिष कहते हैं। आजकल हमारे देश में इस विद्या के विषय में बहुत कुछ भ्रम फैला हुआ है। लोग समझते हैं कि ज्योतिष जाननेवाला पंडित हमारे भाग्य, के विषय में जानता है और इसी लिए लोग अपना भविष्य जानने के लिए ऐसे पंडितों का द्वार खटखटाया करते हैं। यह हमारे अज्ञान का फल है। जैसे हम लंबी जटा रखनेवाले, विचित्र वेषधारी साधुओं को सब कुछ देनेवाला समझते हैं उसी तरह हम आकाशीय पिण्डों के गतिविधि का गणित से पता लगानेवाले को अपने भाग्य का ज्ञाता समझते हैं। सच तो यह है कि ज्योतिष एक विज्ञान है। इससे और सर्वज्ञता से कोई सरोकार नहीं। फलित

ज्योतिष एक ढकोसला है—ठग विद्या है। हमारे देश की तो सभी बातें निराली हैं। हम अपनी मूर्खता, अन्धविश्वास की रक्षा ही में अपनी प्राचीन संस्कृति की रक्षा समझते हैं, परन्तु पाश्चात्य देशों में भविष्य बतलाने के नाम पर लोगों से रुपया वसूल करनेवालों की गिनती ठग और धोका देनेवालों में होती है और पुलिस उनकी देखरेख करती है।

३–मूल विज्ञान—आदिम काल ही में जब मनुष्य ने अपने आस-पास यह अद्भुत सृष्टि देखी होगी तो उसकी जिज्ञासा ने उसे उसका रहस्य जानने के लिए प्रेरित किया होगा। यह सूरज क्या है, यह चाँद क्यों घटता बढ़ता है, ये तारे क्या हैं, ये उल्काएँ क्यों दिखाई पड़ती हैं, ये केतु क्या हैं—आदि बातें उसके मन में उठी थीं। वह उनके विषय में कौतुहलप्रेरित होकर जिज्ञासु हो उठा होगा। कहते हैं कि मनुष्य की सभ्यता का अर्थ है प्रकृति का रहस्य जानना। यदि हमें प्रकृति का कुछ भी हाल न मालूम हो तो हम पशुओं से भी गये-बीते हो जायँगे। मनुष्य का विजय इसी में है कि वह प्रकृित के रहस्यों को समझने का उद्योग करता है। उन्हें समझकर उनसे अपना काम चलाता है। प्रत्येक मनुष्य जिज्ञासु है। यही वृत्ति मनुष्य को सभ्य बनाती है। इस वृत्ति का फल यह है कि मनुष्य प्रकृति का राजा कहा जाता है। कहते हैं कि अत्यन्त प्राचीन काल ही में मनुष्य ने ज्योतिष विद्या की नींव डाली थी। सब से पहले मनुष्य ने जिसे समझने की कोशिश की होगी–वे सूर्य, चन्द्र, ऋतु, रात-दिन आदि थे। इसी से कहते हैं कि ज्योतिष ही

सब विज्ञानों का पिता है। इसी विद्या से विकास प्राप्त कर अन्य विज्ञान उत्पन्न हुए।

४-प्राचीन काल में ज्योतिष—भारतवर्ष में अत्यन्त प्राचीन काल ही से ज्योतिष का ज्ञान चला आता है। कहते हैं कि वैदिक काल में हमारे पूर्वजों को आकाशीय पिण्डों के विषय में जानकारी थी। वे ग्रहों को जानते थे, नक्षत्रों और राशियों को जानते थे। सूर्य और चन्द्र के ग्रहण आदि का पता उन्हें था। महाभारत और रामायण काल में (६००० ई० पूर्व) इस प्रकार के प्रमाण भरे पड़े हैं जिनसे यह निश्चय होता है कि उस समय ये लोग आकाशीय पिण्डों के विषय में खोज करके काफ़ी ज्ञान बढ़ा चुके थे। इसी युग में चीन देश में भी इस प्रकार के ज्ञान का होना पाया जाता है। ये लोग ग्रहण आदि का होना पहले बता देते थे। ईजिप्ट में आकीशीय पिण्डों आदि की पूजा होती थी। उनका ज्ञान उन्हें था। परन्तु उनका अधिकतर झुकाव फलित ज्योतिष को ओर था, ज्योतिष विज्ञान की ओर कम। बेबीलोन में ज्योतिष का प्रचार था। इन्हीं लोगों से यूनान के लोगों ने ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त किया।

५-यूरोप में ज्योतिष—ईसवी सन् के पूर्व ७वीं शताब्दि में बेबीलोन (Babylon) के एक ऋषि ने, जिसका नाम बरोसस (Berossus) था यूनान के एक स्थान पर अपनी विद्या के प्रचार के लिए एक विद्यापीठ स्थापित किया था। इसके शिष्यों में मीलिटस् का निवासी थेल्स् (Thales of Miletus) नामक व्यक्ति भी

था। कहते हैं कि यूनान में ज्योतिष का पिता यही थेल्स् माना जाता है। थेल्स् ईजिप्ट गया। वहाँ उसने ज्योतिष विद्या का प्रदर्शन किया। उसने वहाँ के पिरामिड् (Pyramid) की उँचाई उसकी छाया नापकर बतला दी। इससे वे लोग बहुत प्रभावित हुए। इसी थेल्स् ने ध्रुव तारे की सहायता से यूनानी नाविकों को समुद्र में मार्ग निर्देश का तारीक़ा सिखलाया। इस थेल्स् ने इस प्रकार के अन्य कई आविष्कार किये। उसने वर्ष के चार भाग किये—जब दिन सबसे बड़ा होता है; जब रात सब से बड़ी होती है और जब दो बार रात-दिन बराबर रहते हैं। उसने ज्यामिति (Geometry) के बहुत से नियम बनाये। थेल्स् के बाद पिथागोरस (Pythagoras), अरिस्टोटिल (अरस्तु) आदि ने भी इस विद्या को आगे बढ़ाया। यूनान के इन विचारकों ने अधिकतर तर्क से काम लिया। ईस्वी सन् के पूर्व ३१०-३२० में अलेकज़ेंड्रिया (Alexandria) में रहकर एरिस्टार्कस (Aristarchus) ने सूर्य, चन्द्र के आकार और दूरी आदि का अध्ययन किया और अपने सिद्धान्तों को लिपिबद्ध किया। उसका कहना था कि सूर्य इस ब्रह्माण्ड का केन्द्र है और पृथ्वी आदि ग्रह उसकी प्रदक्षिणा करते हैं। इसके पूर्व लोग पृथ्वी को केन्द्र मानते थे। परन्तु उसका अनुमान था कि चन्द्र की दूरी से सूर्य केवल २० गुना दूर है। एरिस्टार्कस के पश्चात् लगभग दो शताब्दि ई० पूर्व में इसी नगर के रहनेवाले इराटोस्थनीज़ (Eratosthenes) ने पृथ्वी के व्यास की माप बतलाई। उसके अनुसार पृथ्वी का घेरा २४,०००

मील था। आजकल की माप से यह केवल ८०० मील कम है। उससे पता चलता है कि उसका हिसाब कितना ठीक था। ईस्वी सन् के पूर्व १२५ के लगभग हिप्पार्कस (Hipparchus) ने इस विद्या को और आगे बढ़ाया। उसने सूर्य के पिण्ड की माप बतलाई। इस प्रकार के कई अन्य महत्वपूर्ण बातों का उसने पता लगाया। इसके पश्चात् टाल्मी (Ptolemy) ने हिपार्कस के सिद्धान्तों को और स्पष्ट किया। उसके पश्चात धीरे-धीरे यूनान का पतन आरंभ हुआ और इस विद्या की अधिक उन्नति न हो सकी।

६–यूरोप में ज्योतिष—कहते हैं कि जब सन् ६४१ में अरब के राजा ऊमर ने अलेकज़ेन्ड्रिया पर कब्ज़ा कर लिया। तब समस्त विज्ञानों का अंत हो गया। इसके पूर्व सिकन्दर महान का का बसाया हुआ यह नगर विद्या और कला का केन्द्र बन रहा था। अरब लोगों ने यद्यपि इस विद्या में अधिक उन्नति नहीं की पर इन लोगों ने यूनान के ज्योतिष की रक्षा अवश्य की। अरबी में यूनानी ग्रंथों का अनुवाद किया गया। कई सदियों तक मुस्लिम नगरों में ज्योतिष का प्रचार रहा, वेधशालाएँ स्थापित की गयीं। अरबों के हाथ से ज्योतिष का प्रचार स्पेन में हुआ। मध्ययुग के पहुँचते-पहुँचते समस्त विद्या अँधकार में लीन हो गयी। लोग उलूल-जलूल बातों में विश्वास करने लगे। ज्योतिष, हाथ देखने वालों और भविष्य बताने वालों के हाथ पहुँच गया।

७–नये युग में ज्योतिष—इस अंधकारमय युग में सन्

१४७३ में कापरनिकस (Copernicus) का जन्म हुआ। इसने ज्योतिष विद्या का उद्धार किया। इसने पुनः इसका प्रचार किया कि सूर्य ही केन्द्र है। इसके बाद तो लोगों का ध्यान ज्योतिष की



[सौरपरिवार

कापरनिकस

ओर आकृष्ट हुआ। इसके थोड़े दिन बाद डेन्मार्क के रहनेवाले टाइको ब्राहे (Tycho Brahe--1546-1601) ने १५६० में होने वाले सूर्य ग्रहण की पूर्व घोषणा की ! उससे लोगों का उत्साह ज्योतिष की तरफ़ बढ़ा उसने एक वेधशाला भी बनाई। इस

ज्योतिषी ने कापरनिकस के सिद्धान्तों का खण्डन किया—उसके अनुसार पृथ्वी ही केन्द्र थी। इसके शिष्य जॉन केपलर (John Kepler) ने कई महत्व-पूर्ण सिद्धान्तों की खोज की— इनमें तीन ये हैं :—



[सौरपरिवर

टाइको ब्राहे

(१) प्रत्येक ग्रह सूर्य की प्रदक्षिणा दीर्घ-वृत्त कक्षा में करता है जिसकी एक नाभि पर सूर्य रहता है।

(२) ग्रह अपनी कक्षा में इस प्रकार घूमता है कि उसकी गति सूर्य के निकट रहने पर अधिक और दूर रहने पर कम रहती है।



[सौरपरिवार

केपलर

(३) पृथ्वी से ग्रह की दूरी की जितनी गुनी दूरी उस ग्रह और सूर्य की दूरी होगी उसके Cube (घन) ग्रह के सूर्य की प्रदक्षिणा के समय के Spuare (वर्ग) के बराबर होगी। जैसे यदि किसी ग्रह की दूरी सूर्य से पृथ्वी की दूरी को चौगुनी है तो

उसका ४×४×४=६४ बराबर होगा ग्रह के प्रदक्षिणा काल के वर्ष का Square अर्थात ८×८। इससे प्रमाणित होता है कि वह ग्रह सूर्य के चारों ओर ८ वर्ष में घूम जायगा। इस सिद्धान्त का आविष्कार केपलर के ९ वर्ष के परिश्रम का परिणाम था।



[सौरपरिवार

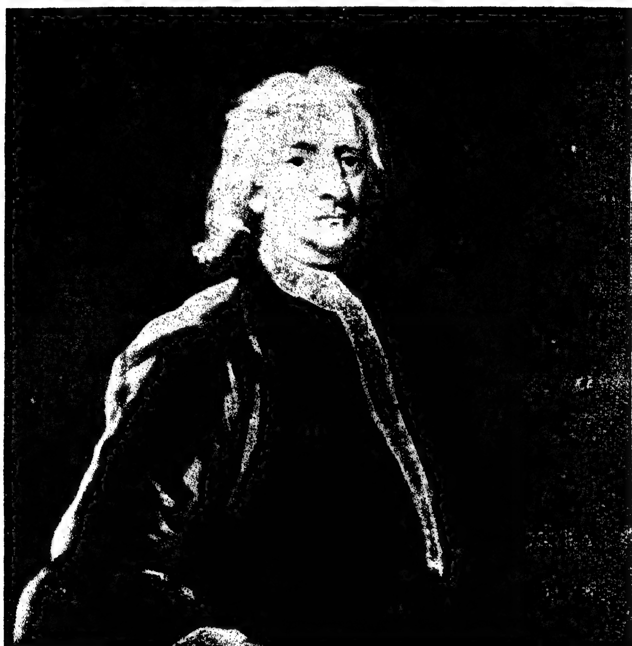
जेल में गैलीलियो

८—नवीन युग—अभी तक ज्योतिषी लोग केवल तर्क से काम लेते थे, किसी प्रकार के विशेष यंत्रों की सहायता से नहीं। केपलर का समकालीन उत्साही ज्योतिषी इटली निवासी गैलीलियो था। इसका पूरा नाम गैलीलियो गैलीली था। इसने इस बात पर ज़ोर दिया कि स्वयं वेध वा अन्वेषण करके सिद्धान्त निश्चय

करना उचित है। इस उत्साही व्यक्ति ने पहले-पहल एक दूरबीन बनाई। जिसकी सहायता से उसने चन्द्र, सूर्य आदि की परिक्षा की। उसने अपनी आँखों से उन आकाशीय पिण्डों को देखकर उनका हाल लिखा। उसने कहा कि चाँद में पहाड़ हैं, बृहस्पति के चार चाँद हैं, सूर्य में कलंक है! ये सब बातें उस समय लोगों को असंभव सी लगीं। प्राचीन दर्शन के भरोसे जो लोग केवल तर्क-वितर्क से दूरस्थ पिण्डों की बात बतलाते थे उन्हें बहुत आघात पहूँचा। बड़ा शोर गुल मचा। लोग गैलीलियो को नास्तिक भी कहने लगे। उसे कारागार भी भोगना पड़ा।

९—**न्यूटन**—गैलिलियो ने अपनी तपस्या से यह सिद्ध कर दिया था कि आधुनिक विज्ञान का आधार केवल तर्क वितर्क नहीं है वरन् उसके सत्य की परख करने के लिए प्रयोग और परीक्षा भी करनी होगी। सन् १६६१ में इंग्लैंड निवासी न्यूटन ने इस ओर ध्यान दिया। इस समय उसकी अवस्था २४ वर्ष की थी। न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त का प्रचार किया। अनेक परीक्षाओं द्वारा न्यूटन ने यह सिद्ध किया कि प्रत्येक पिण्ड एक दूसरे को सीधी रेखा में अपनी ओर खींचता है। जिसमें जितना द्रव्यमान रहता है उतनी ही उसमें शक्ति रहती है और उनकी परस्पर दूरी के अनुसार वह शक्ति घटती-बढ़ती रहती है। इसके अतिरिक्त न्यूटन ने 'त्रिपार्श्व' से सूर्य की किरण का विश्लेषण कर दिखाया। उसने दूरबीन भी बनाई जो गैलीलियो की दूरबीन से अधिक विशेषता रखती थी।

न्यूटन के समकालीन कई ज्योतिष-विशारदों ने बहुत उन्नति की। क्रिश्चियन ह्यजेन्स (Christian Huygens—1629-1695) ने विशेष रूप से प्रकाश का अध्ययन किया। उसने



न्यूटन [सौरपरिवार

बहुत-सी दूरबीनें भी तैयार कीं। उनमें से एक दूरबीन से उसने शनि के वलय की खोज की जो शनि के पिण्ड से कुछ दूरी पर रहता है। न्यूटन के मित्र हैली (Halley—1656-1740) ने बड़े परिश्रम से एक केतु की कक्षा का पता लगाया जो उसी

के नाम से 'हेली-केतु' कहा जाता है। ओलास रोमर (Olaus Roemer 1644–1710) डेन्मार्क का रहने वाला था। इसने बृहस्पति के उपग्रहों के ग्रहणों की खोज की। इंग्लैंड के राज-ज्योतिषी जेम्स ब्रेडले (James Bradley—1693-1762) ने तारों की दूरी नापने की युक्ति निकाली। सर विलियम हर्शेल, उसकी बहन करोलीन (Caroline) और उसके पुत्र सर जान हर्शेल ने ज्योतिष की बड़ी उन्नति की। सर विलियम हर्शेल संगीत के शौक़ीन थे। इनका बहुत सा समय अपनी जीविका कमाने में लग जाता था, फिर भी अवकाश में ये आकाशीय पिण्डों का अध्ययन करते थे। इन्होंने तारों का अध्ययन किया; उनकी दूरी का पता लगाया और यह सिद्धान्त निश्चित किया कि सूर्य स्थिर नहीं है, वरन् वह अपने परिवार के साथ आकाश में चल रहा है। हर्शेल ने सैकड़ों नीहारिकाओं का पता लगाया। इस प्रकार उसने २५०० नीहारिकाओं की सूची तैयार की। उसकी बहन उसे काफ़ी मदद करती थी। उसने भी तीन नीहारिकाओं और आठ केतुओं का पता लगाया।

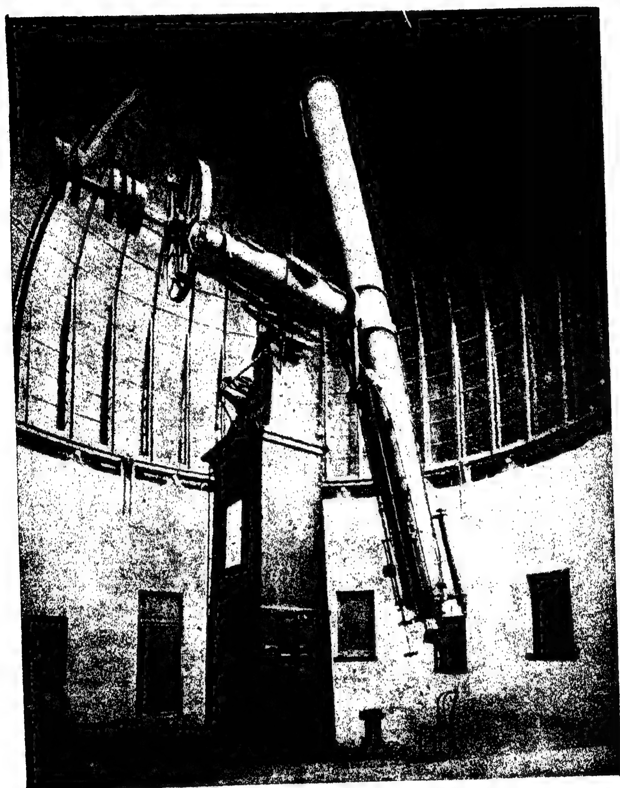
हर्शेल के पुत्र जान हर्शेल (Sir John Herschel—1792-1871) ने भी काफ़ी काम किया। उसने अपने पिता की बनाई नीहारिकाओं की सूची को ठीक करके प्रकाशित किया। बड़े हर्शेल ने तो एक ग्रह 'उरण' (Uranus) का ही पता लगाया था। उसके बाद जर्मन ज्योतिषी बोडे (Johann Ehlert Bode) ने ग्रहों की पारस्परिक दूरी के विषय में एक नियम निश्चित किया,

जिसकी सहायता से अवान्तर-ग्रहों की खोज हुई। सन १८४६ में जर्मन ज्योतिषी गाले (Johann Gottfried Galle) ने वरुण (Neptune) की खोज की।

१०–आधुनिक युग का ज्योतिष—सन् १८६० से फोटो-कैमेरे की सहायता ली जाने लगी। सन् १८८८ में सर डेविड गिल (१८४३-१९१४) ने, जो 'केप-आफ़-गुड-होप' में राज-ज्योतिषी था, केतु का फोटो तैयार किया। इसके कुछ ही दिन बार तो इसकी चलन ही चल पड़ी। सन् १९३२ में कुबेर (Pluto) ग्रह का पता लॉवेल बेधशाला में लगाया गया। इस तरह दिनो-दिन ज्योतिष की उन्नति होने लगी। विश्व के विषय में हमारी जानकारी बढ़ती ही जा रही है। बड़े-से-बड़े दूरदर्शक यंत्र बनाये जा रहे हैं। रसायन और भौतिक विज्ञान गणित की सहाता कर रहे हैं। हमारे विज्ञान का क्षितिज दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। परन्तु हम यह नहीं कह सकते कि हम जहाँ तक पहुँचते हैं वहीं अंत है। सच तो यह है कि विश्व के रहस्यों का अंत नहीं। विश्वकर्मा की अद्भुत लीला को देख कर कुतुहलप्रेरित हो हम जिज्ञासु बनकर उसे जानने की चेष्टा करते हैं। ज्यों-ज्यों हमारा ज्ञान पढ़ता है हमें अपने ज्ञान की क्षुद्रता का अनुभव होता है और उस विश्वकर्मा की अगम्य महिमा के प्रति हमारी श्रद्धा बढ़ने लगती है।

११–ज्योतिष के सहायक—ज्योतिष का जब आरंभ हुआ था उस समय मनुष्य अधिकतर अपने अनुभव से काम लेता

था—धीरे-धीरे तर्क शक्ति से सहायता लेकर वह नियम निर्धारित करने लगा। पश्चात् कुछ यंत्र भी बने जिसकी सहायता से ज्योतिषी



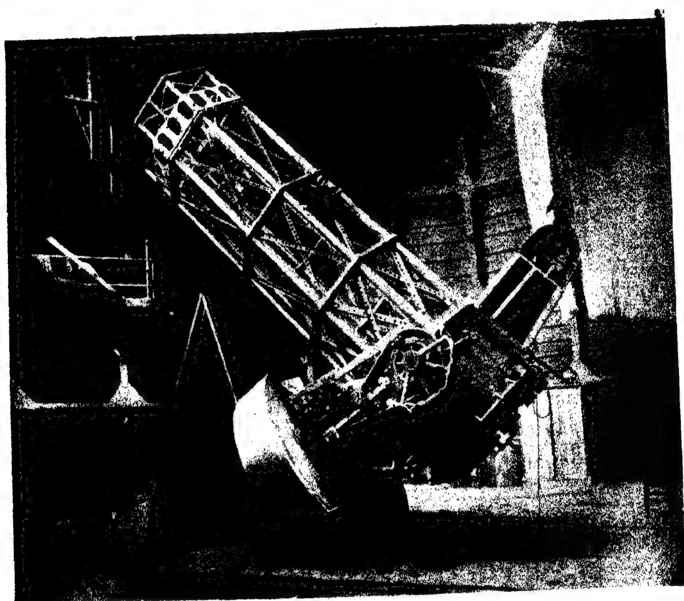
एक दूरबीन [सौरपरिवार

अपनी गणना की सच्चाई की परीक्षा करता था। इन सबके होते हुए भी प्राचीन काल में अधिकतर आँखों की सहायता से ही ज्योतिषी

आकाशीय पिण्डों की परीक्षा करता था। मध्ययुग में गैलीलियो ने पहले-पहल दूरबीन का आविष्कार किया। फिर तो दूरस्थ तारों की अच्छी तरह परीक्षा होने लगी। न्यूटन ने रश्मिविश्लेषक यंत्र का आविष्कार किया, जिससे आकाशीय पिण्डों के प्रकाश की जाँच कर, उनकी बनावट आदि का पता लगाया जाने लगा। विज्ञान के नये युग ने जैसे मनुष्य के जीवन के अन्य अंगों में क्रांति पैदा कर दी उसी प्रकार उसने ज्योतिषी की पुराने ढंग की वेधशाला में भी महान परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। आधुनिक काल का ज्योतिषी यंत्रों से अधिक सुसज्जित है। अब उसकी आँखों की शक्ति अधिक बढ़ गयी है। यंत्रों की सहायता से अब वह आकाश के सुदूर कुहरों की तलाशी ले सकता है, लाखों प्रकाशवर्ष दूर तारों की गरमी नाप सकता है, उनके भीतर क्या है यह बतला सकता है, उनके पिण्ड का चित्र उतार सकता है। हम इन यंत्रों का संक्षेप में यहाँ परिचय देते हैं।

१२—**दूरबीन**—ज्योतिषी की आँखें दूरबीन हैं। किसी समय गैलीलियो ने छोटी सी दूरबीन बनाई थी परन्तु अब तो दिन पर दिन विशालकाय दूरबीनें बनती जा रही हैं। दूरबीन दो प्रकार की होती है। एक को Refractor और दूसरे को Reflector दूरबीन कहते हैं। पहले प्रकार की दूरबीन में ताल होता है जिसमें हो कर प्रकाश एक केन्द्र पर आ मिलता है और एक दूसरे छोटे ताल से हम उसे देखते हैं जिसे 'चक्षुताल' कहते हैं। इस प्रकार की दूरबीन की बनावट एक नली की तरह होती है, जिसकी सहायता

से दूर की वस्तुएँ देखी जाती हैं। इस प्रकार के तालुयुक्त दूरदर्शक से केवल वे ही वस्तुएँ सुगमता से देखी जा सकती हैं जिनमें प्रकाश काफ़ी हो। इस लिए एक दूसरे प्रकार की दूरबीन का आविष्कार हुआ जिसे दर्पणयुक्त दूरबीन कहते हैं।



माउण्ट विल्सन का ६० इंच दर्पण वाला दूरदर्शक [सौरपरिवार

हमारी आँखों की पुतली अधिक से अधिक $\frac{1}{4}$ इंच है। इस छोटे से ताल में कितना प्रकाश आ सकता है? पाँच इंच के व्यास का ताल या Obiect glass हमारी आँख की अपेक्षा ४०० गुना अधिक प्रकाश एकत्र कर सकता है। इस तरह जो वस्तु

हमें आँखों से दिखाई भी न देगी वह पाँच इंच के ताल को स्पष्ट दिखाई देगी। इसी प्रकार यदि ताल १०० इंच का बनाया जाय तो हमारी आँखों की अपेक्षा वह १,६०,००० गुना अधिक काम करेगा और यदि उसे २०० इंच का कर दिया जाय तो उसकी शक्ति ६,४०,००० गुना बढ़ जायगी। अब आप समझ गये होंगे कि क्यों हम दूरबीन की सहायता से मंद-से-मंद तारों को अच्छी तरह देख सकते हैं—यही नहीं जहाँ हमें कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता आकाश के उस कोने में ज्योतिषी तारों का झुंड देख लेता है।

१३–दर्पणयुक्त दूरदर्शक—दर्पणयुक्त दूरदर्शक की सहायता से हम मंद-से-मंद प्रकाश को देख सकते हैं। इसी कारण इस प्रकार की दूरबीन का रिवाज बढ़ रहा है। अब तो अमेरिका में २०० इंच व्यास के दर्पण की एक दूरबीन बन रही है। दर्पण वाली दूरबीन का सिद्धान्त यह है। एक नतोदर दर्पण (Concave Mirror) में पहले प्रकाश एकत्र होता है फिर उसकी किरणें मुड़कर एक दूसरे छोटे दर्पण पर पड़ती हैं। यह कुछ आड़ा रखा जाता है। इस पर से किरणें मुड़कर एक केन्द्र (Focus) या नाभि से होकर 'चक्षुताल' पर पड़ती हैं और वहाँ हम उसे देख सकते हैं।

तालयुक्त दूरबीन और दर्पणयुक्त दूरबीनें दोनों काम में आती हैं। दोनों में विशेषताएँ हैं। पहली प्रकार की छोटी दूरबीनें बड़े काम की होती हैं। परन्तु उनकी शक्ति बहुत नहीं बढ़ाई जा सकती और वे बहुत बड़ी नहीं बन सकतीं। सब से बड़ी इस

प्रकार की दूरबीन का ताल ४० इंच व्यास का है। इसकी अपेक्षा दर्पणयुक्त दूरबीन १०० इंच व्यास की तो है ही परन्तु अब २०० इंच व्यास की बनने जा रही है। माउण्ट बिल्सन वेधशाला के १०० इंच वाले दर्पणयुक्त दूरबीन से ऐसे तारे देखे गये हैं जो हमारी आँखों के लिए मंद-से-मंद तारों की मंदता से ६०,००० गुना अधिक मन्द थे ! इस दूरबीन को बनाने में १,२५,००० पौण्ड खर्च पड़ा था और इसे बनाने में ९ वर्ष लगे थे।

१४–दुनिया का सब से बड़ा दूरदर्शक—तालयुक्त दूरबीन से केवल प्रकाशमान तारे ही देखे जा सकते हैं। जहाँ मंद प्रकाश वाले पिण्डों को देखना होता है वहाँ दर्पणयुक्त दूरबीन से काम लिया जाता है। दर्पण की सहायता से प्रकाश एकत्र होकर एक ताल पर केन्द्रित होता है। इस प्रकार जितना बड़ा दर्पण होता है उतना ही अधिक प्रकाश प्रतिबिम्बत हो सकता है। इसी कारण वैज्ञानिकों ने २०० इंच दर्पण की दूरबीन बनाने का आयोजन किया है। यह दूरबीन अमेरीका में बन रही है। इसके दर्पण के बनाने का भार जनरल इलैक्ट्रिक कंपनी को सौंपा गया। सन् १९३४ में दर्पण को ढलाई का कार्य आरंभ हुआ। बड़ी बड़ी भट्टियाँ बनाई गईं। स्फटिक एकत्र हुआ। २८०० डिगरी के ताप में स्फटिक गलाया जाने लगा। मार्च २५, १९३४ को दर्पण की ढलाई हुई। बड़ी दूर-दूर से वैज्ञानिक इस की ढलाई को देखने आये। दस घंटे तक साँचे में तरल शीशा ढाला गया। यह दर्पण ११ मास में ठंढा हुआ। इसका मूल्य १,००,००० पौण्ड होगा।

पूरी तरह ठंढा हो जाने पर यह दर्पण कैलिफोर्निया में पालिश करने के लिए भेजा गया। इसे ले जाने के लिए खास तौर की चौड़ी माल गाड़ी बनी। पनामा नहर से होकर जहाज पर यह भेजा गया। १९३६ में पालिश का काम आरम्भ हुआ। इस में तीन वर्ष लगने का अनुमान था। इसके लिए विशेष प्रकार की पालिश करने की मशीन बनाई गई है। इस पर अलोमिनम की कलई होगी। दर्पण तय्यार हो जायगा तब यह माउण्ट पालोमार (Mount Palomar) पर खास सड़क बनाकर भेजी जायगी। वहाँ यह दूरबीन एक नली में लगाई जायगी। यह नली ७५ फुट लम्बी होगी। इस का व्यास २० फुट से ऊपर होगा। इस की पूरी मशीन का वजन ८०० टन से ऊपर होगा।

जहाँ यह लगाई जा रही है वह स्थान समुद्र तट से ५००० फुट ऊँचा है। इस कारण वहाँ आकाश साफ़ रहेगा। इस दूरबीन की सहायता से आकाशीय पिण्डों की फोटो ली जायगी। इस दर्पण से आँखों की अपेक्षा १० लाख गुना अधिक प्रकाश दिखाई पड़ेगा। डा० हुब्बुल का अनुमान है एक मोमबत्ती के प्रकाश को यह [redacted] हजार मील पर से दिखा सकेगा। दो सौ इंच के व्यास वाले दर्पण की दूरबीन के बनाने में १२,००,००० पौण्ड खर्च का अनुमान किया गया है। इस दूरबीन की सहाता से चाँद इतना बड़ा दिखाइ देगा मानों वह हम से [redacted] मील की दूरी पर हो!

१५—रश्मि-विश्लेषक यंत्र आदि—यदि आप किसी

तिपहले शीशे के भीतर से सूर्य के प्रकाश को देखें तो उसमें बहुत से रंग दिखाई पड़ेंगे। अकसर आसमान में इन्द्रधनुष इसी कारण दिखाई पड़ता है क्योंकि पानी की बूंदों के भीतर से सूरज की किरणें पार करते समय बिखर जाती हैं। इससे पता चलता है कि प्रकाश-किरणों का हम त्रिपार्श्व की सहायता से विश्लेषण कर सकते हैं। उस प्रकार हम किसी भी प्रकाश किरण की परीक्षा कर सकते हैं कि उसमें कौन-कौन रङ्ग हैं और वह प्रकाश किस वस्तु का है। प्रकाश किरणों के रंग की जाँच कर ज्योतिषी तारों की बनावट आदि का पता लगाता है। पृथ्वी पर जिन वस्तुओं का होना पाया जाता है उनका रंग हमें दिखाई पड़ता है, जिसे देख कर हम उस वस्तु का पता पा जाते हैं। इसी सिद्धान्त पर तारों के प्रकाशकिरण में जितने रंग होते उन्हें देखकर हम उनके भीतर क्या है इसका अनुमान करते हैं।

ज्योतिष के सहायक और भी छोटे-मोटे यंत्र हैं जैसे बोलो मीटर (Bolometer) जिससे तारों का तापमान लिया जाता है, स्टेलर इंटरफेरो मीटर (Stellar Interferometer)— जिसकी सहायता से तारों के पिण्ड का व्यास नापा जाता है, मेरीडियन सर्किल (Meridian Circle) जिसकी सहायता से तारों की स्थिति का पता चलता है, फोटो मीटर (Photometer जिससे तारों के प्रकाश की माप ली जाती है।

समाप्तम्